सार भेद (प्रथम पुष्प)
एवं
सारतत्व, सच्चाई और शान्ति

परमसंत पं. फकीर चन्द जी महाराज के सूत्र

1. इन्सान बनो। अपनी नीयत साफ रखो।
2. हमेशा आशावादी रहो।
3. सुमिरन मन को शांत करता है।
4. मन, वचन और कर्म से शुद्ध रहो।
5. अपने निजी स्वार्थ के लिए औरों को धोखा मत दो।
6. तुम्हारा शरीर हरिमन्दिर है, प्रभु स्वयं इसमें रह रहे हैं। उसको खोजो, वह अवश्य मिलेगा।
7. आत्मा और परमात्मा के मिलाप में मन ही रुकावट है।
8. मन को वश में कर लो, आत्मा स्वयं परमात्मा की ओर खिंची चली जाएगी।
9. सादा ज़िन्दगी और ऊँचे ख्याल रखो।
10. नफ़रत से नफ़रत को नहीं काटा जा सकता।
11. जो वायदा आपने किया है, उसे पूरा करो, यही मानवता है।
12. कर्म के कानून से कोई नहीं बच सकता।
13. जो सलूक आप अपने से नहीं चाहते, वह दूसरों से हरगिज मत करो।
14. अपना बोझ दूसरों पर डालने की कोशिश न करो।

फकीर लाइब्रेरी चैरिटेबल ट्रस्ट
मानवता-मन्दिर, सुतैहरी रोड, होशियारपुर।

परमसन्त परमदयाल
पं. फकीर चन्द जी महाराज

सार-भेद
प्रथम पुष्प

प्रकाशक :

फकीर लाइब्रेरी चैरिटेबल ट्रस्ट (रजि.)
होशियारपुर (पंजाब)

प्रथम संस्करण :
सं० 1879 वि०

द्वितीय संस्करण :
सं० शाका 2016

सर्वाधिकार
सुरक्षित

मूल्य :

भेंट

ऐ इस दृश्य मान जगत के आधार और कुल रचना के मालिक! यह ठीक है कि जब तक मेरा अपना अस्तित्व है तब तक इस जगत और इसके आधार पर मेरा ख्याल होने के भान को भूल जाता हूँ तो तेरा ख्याल भी नहीं रहता है। मगर मेरे अस्तित्व के होने या न होने से तेरे स्वरूप और उसके खेल में कोई अन्तर नहीं आता।

तू जैसा है वैसा रहे हम अपने अस्तित्व से तुमको मानते हैं। जैसे हैं हम और जैसा ख्याल वैसा ही तुमको जानते हैं।

चेतन्यता आई। 'मैं' बनी। इसके साथ हीं संसार को देख कर तेरी ओर ध्यान गया। तुमको ढूँढा। चूंकि विभिन्न प्रकार के संस्कार तेरे सम्बन्ध में बने हुये थे, किसी ने तुझको कुछ कहा, किसी ने कुछ समझा, इसलिये असलियत व सार तत्व की खोज थी। तेरी मौज मुझे हुजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रतलाल के चरणों में ले गई। वहाँ से राधास्वामी मत की शिक्षा मिली। चूंकि संत कबीर व सतपुरुष राधास्वामी दयाल आदि की वाणियों में , जो उच्च कोटि की हैं और उन पुरुषों को वाणियों में जो उनसे पहिले प्रगट हुये थे और तेरे सम्बन्ध में अपना अनुभव वर्णन कर गये थे, भिन्नता थी इसलिये विवश होकर साधन अभ्यास और अमल करने की भारी आवश्यकता प्रतीत हुई। सारा जीवन इस धुन में गुजारा। इसलिये हुजूर सांवलेशाह जी (व्यास) के जो संतों के मार्ग के प्रचारकों में शिरोमणि थे, वचनों को, जो वह वहाँ कहा करते थे जैसा मैंने समझा, लेखबद्ध कर दिया। क्यों किया? तेरी मौज! मेरा अनुभव तेरी जात(स्वरूप) के सम्बन्ध में यह है।

ना मालुम था जैसा पहिले, वैसा ही तू अब रहा।
दौड़ना भागना बाहरी, बेशक मेरा अब है खतम हुआ॥

दृश्य अदृश्य दोनों में है, तू और दोनों से न्यारा।
सब कुछ है और कुछ भी नहीं है, दोनों से रहे पारा॥

देखा नहीं है तुझको लेकिन, देखे से नहीं खाली।
क्या कहूँ कुछ, कह नहीं सकता, बुद्धि हो गई बावली॥

सुरत निरत से परे है, हालत एक अजब।
बयान करने को रूह में, दिल में ताकत नहीं है अब॥

मौज कराती है जो मुझ से, करता हूँ बेग़रज।
वहम था मुझको मिट गया, अब है यह मेरा फरज॥

इख्तलाफ़ राय का भी, बनना पड़ता है शिकार
ऐसी हालत में ऐ दाता! क्यों दिया मुझे यह कार॥

मौज के आधीन हूँ मैं, और मौज ही मेरी सहाई है।
सच्चे होकर शुद्ध दिल से, मैंने कलम उठाई है॥

भेंट हूँ करता मैं तुमको, ऐ दयाल जात आधार।
दिमाग को हरकत दी है, तूने कराया है यह कार॥

जैसा है वह वैसा रहे, हम अपनी हस्ती से तुमको मानते हैं।
जैसे हैं हम और जैसा ख्याल, वैसा ही तुमको जानते हैं॥

– फ़कीर

सार-भेद

1. कर्म भोग या मौज –

मुझे प्रिय बहिन लाजो रानी जो हुजूर साँवलेशाह की परम भक्तिनी और दयापात्र थी, हुजूर साँवलेशाह के जन्म दिन के शुभ अवसर पर अमृतसर में सत्संग के अवसर पर होशियारपुर आकर बुला ले गई। प्रत्येक व्यक्ति अपनी श्रद्धा और विश्वास के अनुसार अपने पूर्वजों की याद मनाता है। मुझ पर उस पवित्र विभूति (हुजूर साँवले शाह) ने बड़ा एहसान किया था। वह इतना बड़ा है कि इससे सारा संसार किसी समय लाभान्विन होगा। आज लोग मेरे इन शब्दों को न समझेंगे मगर चार या पाँच वर्ष के समय के पश्चात् भारत का विद्धत्त मंडल मेरे कथन का निर्णय करेगा और विवश हो जायेगा कि इस लाइन पर आये।

वह एहसान क्या था? मजहब और पंथों के जाल से (रिहाई) छुटकारे की शिक्षा का प्रचार करने के लिये प्रोत्साहन। छुटकारे की शिक्षा का प्रचार करने के लिये प्रोत्साहन। मैं धार्मिक शिक्षा के प्रभाव से उस राम, परम तत्व, मालिके कुल या आधार की खोज के सिलसिले में मौज से हुजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रतलाल जी के चरण कंवल में गया था। वहाँ से मुझे राधास्वामी मत(संत मत) की

शिक्षा मिली। मैंने काफी अभ्यास किया। जीवन प्रेम, श्रद्धा और भक्ति से बीता और इस परम तत्व को दाता दयाल के रुप में माना।

शब्द और प्रकाश के प्रगट होने पर भी उस परम तत्व का आधार के दर्शन न हुये। स्पष्ट शब्दों में यों कहूँ कि आत्मिक संतुष्टि या शान्ति न मिली। सन् 1918 में बगदाद से लाहौर दाता दयाल के पास आया और नौ घन्टे तक लगातार स्वामी जी के निम्नलिखित शब्द से , जो मैं पढ़ा करता था, उनके चरणों पर सिर रखकर प्रार्थना करता रहा। आज अमृतसर के सत्संग पर मौज से वही शब्द निकला जो नीचे लिखा है।

गुरु मोहि अपना रुप दिखाओ। गरु मोहि० ॥

यह तो रूप धरा तुम सरगुन , जीव उबार कराओ॥ १ ॥
रूप तुम्हारा अगम अपारा, सोई अब दरसाओ॥ २ ॥

देखूँ रूप मगन होय बैठूं, अभय दान दिलवाओ॥ ३ ॥
यह भी रूप प्यारा मोको, इस ही से उसको समझाओ॥ ४ ॥

बिन इस रूप काज नहिं होई, क्यों कर वाहि लखाओ॥५ ॥
तातें महिमा भारी इसकी , पर वह भी लखवाओ॥ ६ ॥

वह तो रुप सदा तुम धारो, या ते जीव जगाओ॥ ७ ॥
यह भी भेद सुना मैं तुमसे, सुरत शब्द मारग नित गाओ॥ ८ ॥

शब्द रूप जो रूप तुम्हारा, वा में भी अब सुरत पठाओ॥ ९ ॥
डरता रहूँ मौत और दुख से,निर्भय कर अब मोहि छुड़ाओ॥ १० ॥

दीन दयाल जीव हितकारी, राधास्वामी काज बनाओ॥ ११ ॥

इस पर आपने कहा कि कल प्रात: काल तुमको निज स्वरूप के दर्शन कराऊंगा। दूसरे दिन प्रात: ही आपने समाधि से उठ कर मुझे पाँच पैसे और नारियल भेंट करते हुये नमस्कार किया और कहा मेरी आज्ञा पालन किये हुए यह वस्तु तुमको प्राप्त न होगी। वह आज्ञा यह थी कि सत्संग कराओ और नामदान दिया करो। साथ ही मुझे जगत गुरु की उपाधि (खिताब) देते हुये यह कहा कि ऐ! दीवाने और नादान फकीर! तू यह न समझना कि तू किसी का बेड़ा पार करेगा बल्कि तुझको निज स्वरूप , मालिक या असली और सच्चे सतगुरु के दर्शन परम पुनीत राय सालिगराम साहब का स्वरूप सत्संगियों के रूप में करायेगा। मैंने दाता के नाम पर इस कार्य को आरम्भ किया। सत्संगियों के अनुभवों में मेरा अज्ञान मिटा दिया। सन् 1918 ई० में जब बगदाद में बदअमनी या अशान्ति हुई तो उस समय मेरी आँख खुली। हम सब सत्संगी विभिन्न प्रकार की आपत्तियों में फंसे। जब तीन माह के पश्चात् हम इकट्टे हुये तो उन सत्संगियों ने कहा कि मैं (फकीर) ने उनके अन्दर प्रगट हो उनको अमुक- भिन्न अवसरों पर उनकी सहायता की और उनको अमुक- अमुक राय दी और वे अपनी- अपनी आपत्तियों से बच गये। मैं स्वयं भी एक मोर्चे में फँसा हुआ था कि दाता दयाल के स्वरूप ने प्रगट होकर मुझे हिदायत की कि जिससे हम सब जो मोर्चे में घिरे हुये थे, बच गये। उस समय मुझको विश्वास हो गया कि असली और सच्चा सहायक प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर उसका अपना विश्वास है। इस पर मुझे यह भी विश्वास हो गया कि वह परम तत्व दाता के रूप में इस संसार में जीवों के अज्ञान को दूर करने के लिये आया हुआ है। उसके बाद मैंने समस्त जीवन उस पवित्र अस्तित्व से प्रेम किया। यद्यपि उनका चोला अब भौतिक जगत में नहीं है। मगर उनका स्टेचू मेरे घर में हैं और अब भी प्रात: सांय जब कृतज्ञता का भाव उत्पन्न होता है उससे चिपट जाता हूँ।

दाता दयाल जीवन के अन्तिम आयु में गिदड़वाहा पधारे जहाँ मैं स्टेशन मास्टर था। मैंने उनकी शारीरिक दशा को देख कर प्रार्थना की कि महाराज! अब आपका यह चोला नहीं रहेगा, मुझे हुक्म दे जाओ कि किसको शीश नवाऊँ ताकि उनके द्वारा आपकी शिक्षा का प्रचार होता रहे। संसार के जीव अज्ञानी हैं। जिनके पर्दे नहीं खुले या अनुभव नहीं हुआ वह भटकते न रहें। आपने कहा मैं तुम्हारे सिवाय किसी अन्य व्यक्ति को बेहतर नहीं समझता। मैंने यह काम प्रारम्भ कर दिया। मगर सन् 1918 ई० के पश्चात् बन्द किया हुआ था क्योंकि भेद के मिल जाने से सत्संग कराने और नाम दान देने की आवश्यकता प्रतीत न हुई। चूँकि मुझे सच्चाई से काम करना था और सच्चाई कड़वी होती है, काल और माया के मारे हुये मनुष्य अपने चित्त की वृत्ति थिर न होने के कारण सार भेद को समझने से वंचित होते हैं इसलिये मैं घबराया था। चूंकि मैं किसी से कुछ लेता नहीं था और सत्संगियों को अपने घर आने के कारण भोजन आदि का प्रबंध करना पड़ता था और आमदनी थोड़ी थी घर वाले विरोध करते थे, दुखी होकर सोचा कि हुजूर साँवलेशाह जी के पास जाऊँ और जो कुछ वह आज्ञा दें उस पर चलूँ। दाता दयाल और हुजूर साँवलेशाह का परस्पर प्रेम था। दाता दयाल महर्षि जी मुझे संकेत कर गये थे कि यदि कोई कष्ट प्रतीत हो तो उनसे (हजूर साँवलेशाह)से राय ले लेना। मैं इसलिये सन् १६४२ ई० में उनके दरबार में हाजिर हुआ। उनके सत्संग, उनके शरीर से निकलने वाले परमाणु और उनके सत्संग के वचनों से जो मैंने सुने मुझे विश्वास हो गया कि यह सार भेद के ज्ञाता है और सत्पुरुष हैं। फिर मैं उनसे एकान्त में मिला। यह बहिन लाजो वहां मौजूद थी। मैंने पन्द्रह मिनट निज रचित प्रार्थना कविता के रुप में सच्चे हृदय और भाव से की, जिसका भाव यह था कि मुझे इस काम

अर्थात् सत्संग कराने से छुट्टी दिलाई जाये। इसको सुनकर हुजूर साँवलेशाह जी ने कहा कि फकीर तुम सच्चे हो और सच्चे ज्ञात होते हो। उन्होंने निर्भय होकर काम करने की हिदायत की और सहायता करने का वचन दिया।

मुझे साहस हुआ और मैंने सत्संग का कार्य प्रारम्भ कर दिया। मेरे कार्य की सराहना हुजूर सांवलेशाह ने की। उन्होंने मुझे लिखा था कि जो काम तुमने राधास्वामी मत का किया है वह हम डेरे वाले नहीं कर सके, क्योंकि मैं अपना कुल पुस्तकें उनको भेज दिया करता था जैसे तशरीह हिदायत, बारहमासा आदि। राधास्वामी मत(सन्त मत) की शिक्षा के प्रचार में विभिन्न विभूतियों ने कार्य किया। समय समय की बात है। सत्पुरुष राधास्वामी दयाल की राय में केवल जीवित पूर्ण पुरुष का सत्संग और उसकी आज्ञा पालन यथेष्ठ है इसलिये मैं केवल गुरु मत का मानने वाला हूँ।

गुरु जो कहे सो हित कर मान।
गुरु जो कहे सो चित्त धर ध्यान॥

इस अमल या क्रिया से मनुष्य को अनुभव या ज्ञान हो जाता है और फिर यह संसार दुखदाई नहीं रहता है। जीवन शान्तमय हो जाता है। भ्रम, संशय और अज्ञान दूर हो जाते हैं। दूसरे शब्दों में जीवन मुक्त अवस्था आ जाती है। बस यही रहस्य है । और यही कुछ मैंने संत मत में प्राप्त किया है। चूंकि जीवन की उलझनें जो अशान्ति का कारण होती हैं अनेक प्रकार की होती है इसलिये हर प्रकार की उलझन से निकलने की एह ही तसवीर नहीं होती है, इसलिए संतो के मार्ग में पूर्ण पुरुष से हिदायत लेने की बड़ी आवश्यकता है। चूंकि उनकी विचार शक्ति बलवान होती है, उनका हित और मत मनुष्य को

उलझन से निकाल कर शान्ति दिला देता है। इस ख्याल से मेरी समझ में सत् पुरुष राधास्वामी दयाल ने स्पष्ट शब्दों में सच कहा है कि गत समय का महा पुरुष मनुष्य को काल और माया से नहीं निकाल सकता। विश्वास के लिये प्रत्येक व्यक्ति की अपनी मनोकामना उस महापुरुष के ध्यान से पूर्ण होती रहती है। जिस प्रकार अभी एक आदमी मेरे पास आया। उसने कहा कि उसकी बहिन ने मेरे(फकीर) के ऊपर विश्वास रख कर जो इच्छा की थी वह पूर्ण हो गई। अत: वह मुझ पर विश्वास रखती है । अभी एक और आदमी आया और अपने साथ घी लाया। मेरे पूछने पर कि घी क्यों लाये हो कहा कि आपने मुझे चौवारा और गाय दी है। मैं बड़े अचम्भे में था कि मैंने तो कुछ नहीं दिया। कारण यह था कि उसने सतसंग में अपने मन में मुझे पूर्ण मान कर यह इच्छा की थी कि उसको यह वस्तुएँ मिल जाये। वह मिल गई। यह नियम है। चूंकि वह मुझे घी देने की हठ करता था और मैं लेना नहीं चाहता था वह घी एक बेवा को दे दिया। अब मैं पूछना चाहता हूँ कि जो साधु कहलाने वाले व्यक्ति इस प्रकार के विश्वासियों से चीजें ले लेते हैं उनको क्या परिणाम होगा? क्या यह ४२० नहीं है? इसलिये स्वामी जी ने कहा है-

शिष्य को ऐसा चाहिये, गुरु को सब कुछ देय।
गुरु को ऐसा चाहिये, शिष्य का कुछ न लेय॥

मैं इस प्रकार का प्रोपोगण्डा कराने और आदर मान लेने को भारी अपराध समझता हूँ। अब मैं उन उलझनों का वर्णन करता हूँ जो इस शान्ति या आत्मिक- सन्तुष्टि या साक्षात्कार में रुकावट डालती हैं और जिनका इलाज हुजूर सांवले शाह व अन्य संत महात्मा बताते रहे हैं।

.....

2. उलझनें –

1. विषय विकार का जीवन-

जिस स्त्री और पुरुष में कामाँग अधिक होता है और वह मन से तथा शरीर से विषय – विकार का ध्यान या भोग अधिक करता रहता है उसमें मानसिक और शारीरिक अशान्ति का आना अनिवार्य है। मैंने इस विषय पर आवश्यकता से अधिक प्रकाश डाला है। इसके लिये मेरी 'सच्चाई' नामी पुस्तक का अध्ययन किया जाये। गीता रामायण व अन्य सन्तों की पुस्तकें स्पष्ट कहती हैं कि इन्द्रियों के भोग में जो अधिक लिप्त होगा वह अधिक दुखी होगा। अत: शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य की अत्यन्त आवश्यकता है। इससे मेरा अभिप्राय गृहस्थ के त्याग करने से नहीं है बल्कि समय से पहले विवाह नहीं होना चाहिए तथा इन्द्रियों की तृप्ति के लिये ब्रह्मचर्य को नष्ट नहीं करना चाहिए। जिनमें यह रोग आ जाता है उनको यह आत्मिक शान्ति बहुत देर से मिलती है। शायद जीवन में न भी मिले। यदि मैं १२ वर्ष बसरा बरादाद में न रहता तो न मालुम मेरे जीवन की क्या दशा होती? वहाँ मेरा शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य स्वयं हो गया। यही बातें हुजूर सांवले शाह जी सत्संगों में कहा करते थे। मेरे इस लेख को पढ़ कर कोई स्त्री पुरुष मनमत होकर गृहस्थ का त्याग न करे। अपनी परिस्थितियों को किसी पूर्ण पुरुष को बतला कर उससे सही राय ले लें। मैंने सिद्धान्त की बात वर्णन की है।

2. उलझन – सांसरिक कामनायें –

सांसारिक कामनाओं के कारण मनुष्य अशान्ति और बेचैनी का शिकार होता है। आशा रूपी डोरी की फाँसी हर एक आदमी के गले में

पड़ी है। समस्त धर्मावलम्बी बेरुवाइशी या निष्कामता की रट लगाते हैं मगर यह अमली या व्यवहारिक जीवन के प्रतिकूल है। इसका उपाय है 'काम करो' हुजूर सांवले शाह जी ने मुझे विशेष रुप से लिखा कि जीवन रुपी घोड़े की दो रकाबें हैं-

एक परमार्थ दूसरी स्वार्थ। स्वार्थ के लिये कर्म और परमार्थ के लिये केवल पूर्ण पुरुष का सतसंग। शारीरिक स्वास्थ्य के बिना कर्म नहीं हो सकता। इसलिये गलत तपस्या के भ्रम में अपने स्वास्थ्य को बिगाड़ना नहीं चाहिये।

हाँ, तुम्हारा अपना जीवन सादा हो। किफायतशारी (मितव्ययता) से काम लो। संतमत में जो डेरे, धाम बनाये जाते हैं, इसका यही अभिप्राय है कि जीवों को काम मिले। वही लोग धन्य हैं जो किसी को दान देने के बजाय बेकारों को काम देते हैं। मुझे दाता दयाल जी ने यह आज्ञा दी थी कि अपनी रोजी आप कमाओ। हाँ, अनुचित लालच अथवा चार सौ बीस करके कमाने से बचो। वर्तमान समय की परिस्थितियों के अनुसार मैं कह देना चाहता हूँ कि बहुत अधिक ईमानदारी और सच्चाई व्यवहारिक मामलों में भी अशान्ति उत्पन्न कर देती है। इस विषय में प्रत्येक व्यक्ति को अपने- अपने गुरु या पथ- प्रदर्शक से सलाह लेनी चाहिये।

एक बार एक स्त्री ने मुझ से प्रश्न किया कि मेरे बच्चों की कमाई अच्छी नहीं है मैं क्या करूँ। मैंने उत्तर दिया कि माई ! घर का काम सुबह से शाम तक किया कर और उसके बदले में रोटी कपड़ा ले लिया कर। अन्य किसी वस्तु को या लड़कों की सम्पत्ति को अपना न समझ। उनकी नाजायज कमाई का तुम पर कोई प्रभाव न होगा। इसी सिद्धान्त पर यदि जमा करने की लालसा न हो तो कोई बोझ नहीं।

दृष्टान्त के रूप में मैंने नियम बता दिया है अधिक व्याख्या से कुछ का कुछ , समझे जाने का भय है। इसलिये अधिक अपने गुरु से ही परामर्श करना चाहिए।

3. दुविधा –

मनुष्य के अन्दर किसी बात के निर्णय करने में हिचकिचाहट का माद्या पैदा होता रहता है और मनुष्य में अशान्ति उत्पन्न कर देता है। उसका उपाय धर्म या सिद्धान्त पर स्थित रहना है। यह धर्म या सिद्धान्त परिस्थितियों को दृष्टि में रख कर बनाये जाते हैं। इस में खानदानी रिवाज और देश के वातावरण को भी देखना पड़ता है। यदि मनुष्य स्वयं निर्णय न कर सके तो किसी बुजुर्ग की राय लेना आवश्यक है। संतों के मार्ग में धर्म वह है जो मनुष्य की तवज्जह (ध्यान) को सतपुरुष के चरणों की ओर ले जाये और अधर्म वह है जो मनुष्य को उससे दूर कर दे। वह सत्पुरुष या दयाल शान्ति है। जिस जिस सिद्धान्त या नियम पर चलने से हम निर्भय, अचिन्त (चिन्ता रहित) बेगम (अशोक)बेफिक्र रह सकें, वह धर्म है। मैंने अपने जीवन में अत्यन्त ईमानदारी से काम लिया। दाता दयाल हँस कर कहा करते थे कि ईमानदारी इष्टपद नहीं है। मुझे इस रहस्य का पता नहीं लगता था। देर के पश्चात् ज्ञात हुआ कि इष्ट पद क्या है? इष्टपद निर्भय , निर्वैर और अचिन्त होकर रहना है।

इसके अतिरिक्त मनुष्य की दुविधा का मूल कारण मन की अबलता है। इसका उपाय विश्वास है, जहाँ भी अर्थात् जिस रूप में विश्वास बैठ जाये। मनुष्य का यह विश्वास ही ईश्वर और परमेश्वर या गुरु है। यही मनुष्य की असली सहायता करता है। 'विश्वासम् फलदायकय्' ऐसा शास्त्र कहते हैं और 'मन की गति कही न जाये'

यह गुरुनानक का कथन है। इस ख्याल को या विश्वास को या इच्छा शक्ति को बढ़ाने के लिये सुमिरन, ध्यान और अजपा जाप आदि हैं। मगर यह साधन बिना पूर्ण पुरुष के सतसंग के नहीं करता चाहिये।

गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान।
गुरु बिन नाम हराम है, जो पूछो वेद पुरान॥

लोगों ने यह समझ रखा है कि केवल किसी महात्मा से नाम ले लिया और बस। मैं जोरदार शब्दों में कहता हूँ कि यह बड़ी भारी गलती है। मैं विरोध की परवाह न करता हुआ कहता हूँ कि **पहिले पूर्ण पुरुष का सतसंग करो और संतसंग से अपनी आंतरिक वासनाओं में परिवर्तन करो, जो सुमरिन ध्यान का मूल है। यदि ऐसा न करोगे तो जिस प्रकार की वासनायें तुम्हारे मन में मौजूद हैं सुमरिन ध्यान करने से वही वासनायें (चाहे वह बुरी हैं या भली)** बढ़ जायेंगी और तुम अपनी वासनाओं के अनुसार अपनी दुनिया बना लोगे।

मैं कह रहा हूँ हेलामार, जीवन अपने का अनुभव सार।
जैसी वासना होगी अन्तर में , वैसी पकेगी मेरे यार॥
ताते लिया है सिर पर भार , प्रगटा हूँ जग में कहने सार।
बिन सतसंग गुरु पूरे के, तुम होगे जगत में ख्वार॥

1. श्री गुरु गोबिन्द सिंह को बचपन से ही अपने पूज्य पिता के साथ रहने से ही देश की परिस्थिति के प्रभाव से हिन्दू जाति की रक्षा का ख्याल मिला था। आपने तप किया और उनकी अपनी ही इच्छा ने भजन, सुमिरन और ध्यान करने से शक्ति का रूप धर कर तलवार दी। वह जो कुछ कर गये सब को ज्ञात है।
2. हुजूर जी आनन्दस्वरूप साहब आगरा वाले, जैसा कि उनके एक सहपाठी ने कहा था, बचपन से ही स्टेट बनवाने और

जनसाधारण को लाभ पहुँचाने का ख्याल था। राधास्वामी मत में आने से उनका सुमरिन ध्यान रंग लाया और वह जो नेक कार्य कर गये, हम सब उनके कृतज्ञ हैं।

3. हुजूर दातादयाल महर्षि शिवव्रतलाल ने सार तत्व और सच्चाई के वर्णन करने और धार्मिक पक्षपात को दूर करने के लिये कम से कम १५०० पुस्तकें लिखीं। उन्होंने यह ख्याल आर्य- समाज के गलत खण्डन के कारण से लिया था जैसा कि उनकी अपनी पुस्तकों के प्रकट होता है।
4. श्री साँवलेशाह ने धार्मिक पक्षपात को दूर करने का ख्याल लेकर डेरा बनाया। यह ख्याल उनको बाबा जैमल सिंह से मिला। उन्होंने मसलहत से राधास्वामी मत की वाणी में जहाँ हुक्का आदि को उल्लेख था काट दिया, ताकि धार्मिक घृणा न रहे। उनका एक पत्र हुजूर कृपालसिंह के नाम लिखा हुआ था जो मासिक पत्र 'दयाल' में प्रकाशित हुआ है। उसमें सपष्ट लिखा हुआ है कि संत मत कोई मजहब नहीं है बल्कि अध्यात्म (रूहानियत), जिसको मैं शान्ति और आनन्द कहता हूँ, का मार्ग है।
5. ध्रुव ने राज न मिलने के कारण विष्णु भगवान से मिलने के लिये तप किया। दूसरे शब्दों में सुमिरन ध्यान किया उसकी अपनी ही आस ने विष्णु का रूप धारण करके उसको राजपदवी दिलाई।
6. हुजूर कृपालसिंह, जो किसी समय सांवलेशाह के गुरु मुख कहलाते थे, की आस थी कि उनकी जगह सच्चाई की शिक्षा को फैलायेंगे। वहाँ अवसर न मिला तो उनकी अपनी आस ने ही उनके अन्दर हुजूर सांवलेशाह का रूप धर कर इस कार्य को प्रारम्भ कराया और उनकी आस ने ही महर्षि जी का रुप धर कर मेरे नाम उन्होंने संदेश दिया। जैसा ख्याल वैसा हाल।

7. मैंने बचपन से उस परम तत्व, मालिक कुल या राम के मिलने की लालसा की थी और जानना चाहता था कि सार तत्व क्या है। वह समझ गया।

परम तत्व मैं हूँ, मुझमें परम तत्व अयाँ है।
किसको ढूढूँ अब मैं, उससे खाली न कोई स्थान है॥

सन 1947 ई० की घटनाओं से मेरे विचारों ने पलटा खाया और अब 'प्राणी' मात्र को शान्ति मिले' (Peace to Humanity) की आस रखकर सुमिरन ध्यान भजन करता रहता हूँ।

.....

सांसारिक इच्छायें –

हम अपने सम्बन्धियों और संतान को जब अपनी इच्छानुसार नहीं देखते तो अशान्त हो जाते हैं। इस विषय में मेरा अनुभव यह कहता है कि जिस प्रकार के ख्याल से संतान पैदा की गई उसी ख्याल का संस्कार अथवा माँ- बाप के हर प्रकार के प्रभाव सन्तान में आते हैं; इसका इलाज पैबन्द लगाना है अर्थात् उनको किसी पूर्ण पुरुष के सत्संग से लाभान्वित कराना चाहिये।

शठ सुधरहिं सत संगत पाई।

जिस तरह खट्टे को मीठे का पैबन्द लगाने से यद्यपि वह मीठा न बनेगा, मगर संतरा अवश्य बन जायेगा, इसी प्रकार बहुत कुछ हद तक सुधार की आशा की जा सकती है।

इसलिये यह अनिवार्य है कि सब से पहिले मनुष्य की वासना, इच्छा या कामना को अनुकूल बनाया जाये। यह काल और माया का जगत है। प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्म के भोगने के लिये विवश है। यदि कोई पूर्ण पुरुष मिल जाये तो अपने संकल्प से तथा हित से मनुष्य की

इच्छाओं को पूर्ण कराता हुआ निष्कामता का धन देकर इस संसार के चक्र से छुटकारा करा देता है।

इस संकल्प की दुनिया अर्थात् मानसिक जगत से जब तक मनुष्य उपराम नहीं होता है सुरत शब्द योग की शिक्षा लाभप्रद नहीं हो सकती। यों तो प्रकृति माता का प्रबन्ध ऐसा है कि मनुष्य को अनुभव होता जाता है और वह अनुभव के बाद स्वयं उपरामता की अवस्था में आता रहता है। निरादर हो गया, धन सम्पत्ति चली गई, सन्तान मर गई, शरीर नकारा हो गया आदि ऐसी घटनायें हैं जिनसे मनुष्य में उपरामता आ जाती है। यह शिक्षा भी ऐसे लोगों के लिए है–

विषयों से जो होय उदासा।
परमारथ की जा मन आसा॥
धन संतान प्रीति नहीं जाके।
खोजत फिरे साध गुरु जाके॥ आदि आदि।

ऐसे पुरुषों के लिए आदेश है कि किसी साधु महात्मा से नाम लेकर कमाई करें। जब वह साधु या महात्मा स्वयं उस अन्तिम पद (विदेह गति) में जायेगा तो वह भी चला जायेगा। साथ ही यह भी आदेश है कि जब-जब संत सत्गुरु प्रगट हों उनकी संगत से लाभ उठाना आवश्यक है।

सन्त सत्गुरु वह पवित्र महान् पुरुष है जिसकी अपनी निजी कोई कामना नहीं होती और न किसी कामना से प्रभावित होता है। वह जीवन की समस्त परिस्थितियों पर अधिकार के साथ स्थिर हो सकता है। ऐसे दुर्लभ पुरुष के सत्संग में उससे दृष्टि जोड़कर देखने और उसके वचनों को सुनते हुये मनुष्य की दशा बिना किसी परिश्रम के बदली जाती है। यह असली सुरत शब्द योग है।

जिस प्रकार वाय साधन से हुआ, इसी प्रकार अन्तरीय साधन से आनन्द, सरूर, अनुभव और निर्भान्ति उत्पन्न होती रहती है। सत्संगों में रोचक और भयानक बातें डेरे या सोसाइटी को स्थापित करने के लिए आवश्यक है मगर ऐसे सत्संगों से इन लोगों को जो अन्तरीय आनन्द या शान्ति चाहते हैं। शान्ति नहीं मिल सकती। इस समय वह पंथ, जो कि मनुष्य की अन्तरीय शान्ति के लिये था, बाहर मुखी हो गया है। महात्मा लोग अपना मंडल बढ़ाने के लिये अनेक प्रकार का प्रोपोगंडा कराते हैं।

जीव अकाज देख दिल में दर्द समाई।
प्रगटा जग में मेरे मित्रो यह फ़कीर सौदाई॥

नाम नहीं किसी से मिलता नाम तुम्हारा जाती।
अपने जीवन के अनुभव से यह समझ है आई॥

संत कबीर का कथन है कि नाम उस समय मिलता है–

पहिले दाता शिष भया, जिन तन मन अरपा शीश।
पीछे दाता गुरु भया, जिस नाम दिया बख्शीश॥

जब मनुष्य शारीरिक और मानसिक भान बोध को छोड़ देता है अर्थात् इनका मान नहीं रहता तो जो वस्तु शेष रह जाती है वह नाम है।

तीन छोड़ चौथा पद दीन्हा। सत नाम सतगुरु गति चीन्हा॥

प्रारम्भिक नाम का संस्कार जो कोई सतगुरु किसी को देता है वह यह संस्कार है कि तू उस परम तत्त्व या आधार का अंश है। तू उससे निकला है। उसमें समा जायेगा। तू अपने–आपको उस परम तत्त्व से जोड़ जो तेरा स्वरूप है।

मानवीय तबज्जह या जीवन शरीरधारी होने के कारण अनेक प्रकार के शारीरिक मान रखती है। इस ओर से तबज्जह हट जाने और

फिर आगे मानसिक जगत में प्रवेश होकर उसको भी त्याग देने और फिर आगे आत्मिक अवस्था का आनन्द लेकर उसे भी छोड़ देने से मनुष्य अपने अस्तित्व को खोकर सर्व व्यापक तत्व से लय होकर अपनी सत्ता या व्यक्तित्व को खो जाता है। मेरे अनुभव में यह जितनी श्रेणियाँ है जिनका वर्णन सुनकर मैं वर्षों शब्दों के जाल में भटकता रहा, जीवन के मान बोध हैं।

सहस्रदल कंवल	**त्रिकुटी**	**सुन्न**
अनेक प्रकार के संकल्प	केवल इष्ट का ख्याल	इष्ट के ख्याल में मस्ती

महासुन्न

इष्ट के ख्याल में लय हो जाना

यह मानसिक जगत के खेल हैं। यदि किसी को कोई बाहरी पूर्ण पुरुष मिल जाता है तो वह अपने सच्चे हित से उसको समझा देता है। फिर वह अन्तर में शब्द का साधन करके मन के चक्र से ऊपर आ सकता है। इस अवस्था का नाम सोहंग पुरुष है। इसी का नाम वेदान्त है। हुज़ूर सांवलेशाह कहा करते थे– **अन्दर बढ़ो पर्दा खोलो।** यह पर्दा खुलना इस ज्ञान का प्राप्त करना है। वह कहा करते थे कि दसवें द्वार के आगे सत्गुरु खड़ा है। वह सत् गुरू शब्द है न कि किसी पुरुष का आकार। वह शब्द ही तुमको आगे ले जायेगा। वह यह भी कहा करते थे कि सूर्य, चन्द्रमा और तारागणों के आगे सतगुरु मिलता है। सूर्य आदि का उत्पत्ति प्रभावों के अनुसार प्रत्येक मनुष्य के ख्यालात होते हैं। अत: सन्त मार्ग में इस काल और माया से निकलने के लिये शब्द योग है। यह हालत भी उनके भाग्य में आती है जिनको यह चन्द्र,

सूर्य, ग्रह अनुकूल पड़ते हों, अर्थात् जिसके भाग्य में हो। इसलिये यह सुरत शब्द योग जन साधारण के लिये नहीं है।

कुछ करनी कुछ करम गति, कछुक पूर्वले लेख।
देखो भाग कबीर का, लख से भया अलेख॥

इस शब्द और प्रकाश की भी श्रेणियाँ हैं जिनको मेरी समझ में सत, अलख और अगम भी कहते हैं। इससे आगे जब प्रकाश और शब्द गुम (लुप्त) हो जाते हैं तो एक अपरिमित जगत आ जाता है।

इतना ऊँचा जो कोई चढ़े।
रूप रंग रेखा से परे॥

इस अनुभव के पश्चात् यह समझ आई अथवा यह ज्ञान हुआ कि प्रत्येक मनुष्य एक चेतन्य शक्ति का बुलबुला था, अंश है। इस अनुभव में रहने वाले पुरुष को दिव्य पुरुष कहते हैं।

न देह मेरी न मन मेरा, न रूह मेरी रही बाकी।
गर बाकी रहा कुछ है, तो कुदरत ही रही बाकी॥

किस को करूँ तलाश, और पूछूँ भला किसे अब।
'मैं' मेरी एक फर्जी थी, उसकी 'नहीं' रही बाकी॥

दुनिया जैसे पहिले थी, वैसी की वैसी है।
भरम अज्ञान भासे थी, नहीं अब है बाकी॥

स्वामी जी की वाणी है–

अरे मन देख कहाँ सँसार। झूठे भरम हुआ बीमार।
भाग जगा गुरु मत में आया। भरम गये गुरु ज्ञान को पाया॥
पाप ज्ञान छूटा संसारा। अब खेल समझ में करूँ जग कारा।
बड़े भाग हम सतगुरु भेंटे। उनकी दया मिटे सब संशय॥

गुन गाऊँ निश दिन हर्षाई। मेरी बिगड़ी अब बन आई।
कुछ दिन का मित्रो है संयोग। फिर फ़कीर आपे में गुम होगा॥

अब मस्ती आई, लिखा नहीं जाता।
फ़कीर अलमस्त रहे दिन राता॥

मैंने उस शिक्षा को, जो हुजूर बाबा जी दिया करते थे जैसा समझा अपने अनुभव के अनुसार उनके जन्म दिन के अवसर पर अमृतसर में वर्णन कर दिया और आज इसको लेख बद्ध कर रहा हूँ। अब कुछ प्रश्न अपने दिल से ही उत्पन्न करके उत्तर सहित लिखता हूँ ताकि किसी सच्चाई पसन्द मनुष्य को यदि कोई शंका उत्पन्न हो तो उत्तर प्राप्त कर ले। मेरे लेख जन साधारण के लिए नहीं है। जो विवेकी और अभ्यासी हैं, वही मेरी बात को समझ सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का अपना-अपना काम है। अपने स्थान पर सभी सही मार्ग पर हैं।

प्रश्न ***हुजूर कहा करते थे कि सतगुरु मरते समय आकर संभाल करता है। क्या यह ठीक है?***

उत्तर हाँ, वह कहते थे कि सतगुरु एक शक्ति है और मैं यह कहता हूँ कि मनुष्य के अपने विश्वास की शक्ति है जिसने जिस रूप में उसको माना, वह उसी रूप में आकर उसके विश्वास के अनुसार उसको नया जीवन देता है। इसके प्रमाण में जब कोई कहता कि आप अमुक मरने वाले को मोटर पर लेने आये तो आप कहा करते थे कि भाई मैं सिरसा में था। वह सदा कहा करते थे कि सत्गुरु जंगलों व पहाड़ों में रात-दिन साथ रहता है। मेरे जीवन का भी अनुभव यही है। इसकी पुष्टि में एक घटना सुनाता हूँ। एक मनुष्य की मुत्यु हुई, उसके नातेदारों ने कहा कि मैं (फ़कीर) उस मृतक को अन्त समय में ले जाने के लिए पालकी लाया। मेरी समझ में

सतपुरुष झूठ नहीं बोलते। मैं कहीं नहीं जाता न गया। यदि कोई और महात्मा जाता है तो उसका मुझे पता नहीं। आज मुझे इस रहस्य का पता न लगता तो मैं रंज में मर जाता कि मैं काल और दयाल को समझ न सका। या खुले शब्दों में राधास्वामी मत का खण्डन कर जाता। सत्पुरुष राधास्वामी दयाल ने, जिनको मैं सच्चाई और सच्चाई की मूर्ति समझता हूँ, उसी अनुभव के आधार पर समस्त संसार के मज़हबों को तथा सूफीइज्म और वेदान्त को भी काल और माया के घेरे में रखा। मनुष्य का मन ही मनुष्य का साथी है और मन हीं शत्रु है। इस मन में अलग होने के लिए प्रकाश और शब्द का मार्ग है। इसलिए असली सत्गुरु शब्द और प्रकाश है। कबीर साहिब की वाणी है–

शब्द गुरु को कीजिए, बहुते गुरु लबार।
अपने-अपने स्वाद को, ठौर-ठौर बटमार॥

प्रश्न ***क्या अन्तरीय चढ़ाई बाहरी गुरु की सहायता के बिना हो सकती है?***

उत्तर बाहरी पूर्ण पुरुष के ख्याल या हित में बड़ी प्रबल शक्ति होती है। उसका हित व उसकी इच्छा कि जीव का कल्याण हो, विश्वासी जीव के दिमाग में प्रभाव कर जाता है और वह ख्याल या संस्कार साधन और अभ्यास से बढ़ जाता है और जीव का काम बन जाता है।

सन्त डारिया बीज, घट घरती जा जीव के।
को समरथ जो जार, सके इस बीज को॥

प्रश्न ***क्या कारण है कि लाखों मनुष्यों ने नाम लिया हुआ है, मगर उनको वह वस्तु नहीं मिली?***

उत्तर किसी पूर्ण पुरुष का सतसंग ध्यान से नहीं सुना। जब तक गुरु भक्ति पूरी नहीं होती ध्यान नहीं बनता,अर्थात् पूर्ण पुरुष के वचन को सुनकर गुनो अन्यथा काम न बनेगा।

पाँचवी उलझन–आवागवन या जन्म-मरण।

विशेष रूप से हिन्दुओं में इस आवागवन की उलझन में आये हुए मनुष्य अधिक संख्या में पंथ के दायरे में आते हैं। इस सम्बन्ध में मैंने स्वामी जी की वाणी–

गुरु दीना अब अगम का।
सुरत चली तजि देश भरम का॥

इस के आधार पर 'आवागवन उर्फ जीवन रहस्य' नामी पुस्तकें उर्दू और हिन्दी में पूर्ण विवरण सहित लिखी हैं उनका अध्ययन किया जा सकता है। यहाँ संक्षेप में इतना कहता हूँ–

गुरु ज्ञान बिना आवागवन का संशय न जावे।
बिना ज्ञान कोई नर मुक्ति न पावे॥
बिना योग, किसी ने ज्ञान न पाया।
ताते संतन सुरत शब्द मत गाया॥

मगर इस सुरत शब्द के साथ किसी पूर्ण पुरुष का सत्संग अनिवार्य है। इसके बिना कोई लाख अभ्यासी हो आवागवन के चक्र से नहीं बच सकता।

कोई योग कर ब्रह्म कहाया।
किसी ने खुद को ही सब कुछ पाया॥
कोई अलख अगम बन बैठा।
कोई अपने को अकाल कहाया॥
जब लग कुछ बनते रहोगे भाई।
आवागवन से होत न रिहाई॥

हमने भी इस राह में चक्कर खाया।
पर्दा खुला तब भरम गंवाया॥

यही बात हुजूर सांवलेशाह कहा करते थे। 'अंदर बढ़ो, पर्दा खोलो', वह पर्दा खुलना जो मैंने समझा है वह यह है कि सुरत जब शब्द को सुनती-सुनती अशब्द होकर अपने-आप को भूल जाती है तो फिर जब उत्थान होता है, तो ज्ञान हो जाता है या पूर्ण विश्वास हो जाता है कि मैं एक चैतन्य शक्ति का बुलबुला या अंश हूँ। सत में क्षोभ होने पर या मौज से उत्पन्न हुआ और उसमें समा जाऊँगा। इसलिये राधास्वामी मत का इष्टपद- राधा (सुरत) और स्वामी (आधार) अर्थात् राधास्वामी। स्पष्ट शब्दों में यों कहिये कि यह विश्वास हो जाता है कि हम एक बुलबुला हैं या चैतन्य शक्ति के अंश हैं अथवा एक बोधक शक्ति हैं और रचना में शब्द और प्रकाश से पैदा हुए हैं। इसी में समा जायेंगे। यही अनुभव राधास्वामी नाम है। यह एक अवस्था या कैफियत का प्रकट करना है जो इस शब्द के द्वारा वर्णन किया गया है। चूँकि यहाँ आकर अथवा इस अनुभव को प्राप्त करके समस्त अहंकार समाप्त हो जाते हैं। इसलिए आवागवन का भ्रम समाप्त हो जाता है। यह मेरा निज अनुभव है।

प्र. गुरु भक्ति क्या है?

उ. दर्शन करे वचन पुनि सुने, सुन सुनकर नित मन में गुने।
गुन-गुन काढ़ लेय तिस सारा, काढ़ सार तिस करे अहारा॥
कर अहार पुष्ट होय भाई, भव भय लाज सब गई गंवाई॥

जिनकी विवेक शक्ति नहीं जागती या जो मूढ़ अवस्था में हैं उनके लिये शारीरिक व अन्य सेवायें आवश्यक हैं। जब तक इन

मंजिलों या अवस्थाओं से मनुष्य नहीं गुजरता विवेक उत्पन्न नहीं होता।

प्र. सत् पद क्या है?

उ. प्रकाश और शब्द का मंडल।

प्र. मन क्या है?

उ. फुरना (संकल्प ही मन है)

प्र. क्या मनुष्य फुरना से अलग रह सकता है?

उ. केवल साधन के समय फुरना से अलग रह सकता है। इसलिए पूर्ण सत्गुरु की आवश्यकता प्रतीत होती है कि वह मनुष्य को सच्चाई और सार तत्व बता कर ज्ञान करा दे कि जीवन क्या है? इस अनुभव के पश्चात् जीवन मुक्त अवस्था आ जाती है।

जैसे जल में कमल निरालम्ब मुर्ग़ाबी निशानिये।
सुरत शब्द भव सागर तरिये, नानक नाम बखानिये॥

प्र. शरीर के त्याग के बाद क्या होगा?

उ. अभी मेरे शरीर का त्याग नहीं हुआ। हाँ, प्रतिदिन साधन करता हुआ शरीर और मन को छोड़ता रहता हूँ और कभी-कभी प्रकाश और शब्द का रूप होकर उसको छोड़ कर असीमित बनता रहता हूँ।

प्र. इस अनुभव के आधार पर जो जीवन काल में खोज करने से हुआ, कई बार यह प्रश्न पैदा होता है कि जब संत मत की शिक्षा का परिणाम जीवन मुक्त अवस्था अर्थात् निर्भ्रान्त, निर्भय, निर्वैर होना और अन्त में विदेह गति

अर्थात् अपने अस्तित्व को खोकर असीमित हो जाना है तो फिर इन संतों ने डेरे, धाम, पंथ आदि क्यों बनाये?

उ. 1. जहाँ तक मेरा निज अनुभव है वह यह है कि उनके अपने प्रारब्ध कर्म थे। डेरे और धामों के बनाने से अथवा सहस्रों लोगों के पीछे लग जाने से कोई व्यक्ति रहनी के दृष्टिकोण से जीवन-मुक्त अवस्था को प्राप्त किया नहीं माना जा सकता है। यह जीवन की एक अवस्था है, जो एक कंगाल से कंगाल, राजा, शूर, स्त्री या पुरुष सभी को प्राप्त हो सकती है।

2. मौज को जो काम किसी से लेना है, वह स्वयं करा लेती है।

मौज किसी को भिखारी किसी को दुखारी बना रही है।
काम अपना कर रही है और सब से करा रही है॥

मौज को कुछ थोड़ा सा समझता हूँ और अपनी समझ के अनुसार अपना विचार प्रकट करता हूँ।

हुजूर सांवलेशाह जी ने डेरा बनाया। लाखों की संख्या में हुजूर ने लोगों को संत मत में सम्मिलित किया। विशेष रूप से पंजाब का अधिक भाग विश्वासी बना। दाता दयाल महर्षि जी ने, जिनको हुजूर सांवलेशाह सन्त मत का वेद व्यास कहा करते थे, हजारों की पुस्तकें लिखी और दक्षिण की ओर इस मत को अधिक फैलाया। जिस प्रकार पंजाब में यह ख्याल फैला हुआ है, इसी प्रकार उस क्षेत्र में स्थान-स्थान में सत्संग घर है। यहाँ हुजूर साँवलेशाह की जगह बाबा हरचरन सिंह जी काम करते हैं। उस क्षेत्र में भाई नन्दूसिंह महाराज काम करते हैं।

दयाल बाग आगरा की नींव हुजूर साहब जी महाराज ने डाली और सन्त मत का प्रचार किया। उनकी जगह हुजूर मेहता साहब सोशल कार्य कर रहे हैं जो मुबारिक हैं और इसकी बड़ी आवश्यकता है।

इसी प्रकार विभिन्न महा पुरुष कार्य कर रहे हैं। ऐसा क्यों है? मेरी समझ में मौज को इस संसार में एक नया दौर (चक्र) लाना मंजूर है जिसकी अत्यन्त आवश्यकता है, ताकि मानव जाति का भ्रम व अज्ञान दूर हो जाये। असली मजहब है शब्द और प्रकाश का साधन और शिव संकल्पमस्तु का सिद्धान्त, जो मानसिक जगत में अनिवार्य है। यही प्रवृत्ति और निवृत्ति मार्ग में सफलता का रहस्य है। वही असली शिक्षा प्राचीन ऋषि अधिकार और संस्कार के अनुसार दे गये।

मैंने निज अनुभव के आधार पर आवाज उठाई कि इन्सान बनो, जो कि सन्त कबीर के इस शब्द का सारांश है-

गुरु पशु नर पशु त्रिया पशु, वेद पशु संसार।
मानुष ताही जानिये, आहि विवेक विचार॥

मानव बनकर ना मुआ, मुआ तो डाँगर ढोर।
ऐको जीव ठौर न लगा, लगा तो हाथी घोड़॥

मेरी यह सच्चे हृदय से पुकार है कि मानव जाति पूर्ण पुरुषों की शिक्षा से लाभान्वित हो और अपना और दूसरों का जीवन सुख से गुजारे। चूँकि सन्तों के अनुयायियों में भी घृणा और द्वेष देखता हूँ इसलिये विवश होकर लेखनी उठाता हूँ।

मैंने बिना गुरु या महात्मा बने हुये भाई के नाते से सारभेद खोलने का साहस किया और अपना यह लेख पब्लिक में प्रस्तुत कर

रहा हूँ ताकि जीवों का भ्रम अज्ञान दूर हो। यही काम दाता दयाल ने मेरे सुपुर्द किया था। उनकी वाणी मेरे नाम है–

तू धन है तू धन है, तेरी उत्तम देही।
जग कल्याण जगत में आया, परम दयाल सनेही॥

मेरे चोला छूटने के पश्चात् इस जगत कल्याण के काम का ख्याल धार्मिक जगत के अतिरिक्त भारत के शासन में आयेगा।

.....

वर्तमान और भावी समय के पूज्य महात्मा साधु और सन्त जनो!

नमस्कार!

साधु सन्त की महिमा सुनता आया था बचपन से।
और था संस्कार मिला, मुझे सत् गुरु के वचन से॥

मुझे दाता दयाल ने कहा था–

मैं नहीं राम कृष्ण का सेवक, ईश ब्रह्म ना मानूँ।
मैं फ़कीर का नाम दीवाना, सबसे बढ़ कर मानूँ॥
जो फ़कीर मोहि दर्शन देवे, अपना भाग सराहूँ।
अपने तन के चाम की जूती, पग फ़कीर पहराऊँ॥

– आदि आदि

मेरा जीवन साधु-सन्त बनने और उसके महत्व के समझने में और जानने में व्यतीत हुआ। मैं रहस्य या भेद को जानना चाहता था कि ईश्वर, परमेश्वर, ब्रह्म, पारब्रह्म आदि से फ़कीर, साधु संत का दर्जा कैसे बड़ा है? राधास्वामी मत में जिसमें मौज मुझे ले गई, एक शब्द है–

न जानूँ सत अलखअगम अनामी।
सब से बढ़कर मानूँ राधास्वामी॥

इस प्रकार के संस्कारों से प्रभावित होकर मैंने जीवन भर जो कुछ मुझ से हो सका किया। पंथों, मजहबी संस्कारों विभिन्न सम्प्रदायों और महात्माओं के वचनों में भिन्नता दिखाई पड़ती थी। इच्छा थी कि सच्चाई और सार बात को देखूँ और साथ ही यह भी इच्छा थी जिज्ञासुओं के लिए अपना अनुभव वर्णन कर जाऊँ, इसलिये यह लेख 'सारभेद' मेरे इस भाव की एक किस्त है जो मैं आप लोगों की भेंट कर रहा हूँ। मैंने न कोई निज स्वार्थ रखा न हेर-फेर कर बात की। मैंने सुना था कि साधु और संत संसार के प्राणियों को इस संसार के दुखों से बचने के उपाय बताते हैं। साथ ही उससे बचने में सहायता करते हैं। इसके अतिरिक्त ऐसी मंत्रणा या सम्मति देते हैं कि जिस पर चलने से मनुष्य इस आवागमन के चक्र से निकल सकता है और वे मालिक से मिला देते हैं। मेरे अनुभव में यह आया है कि इस संकल्प के जगत् में संकल्प की प्रधानता है। संकल्प या ख्याल एक महा शक्तिशाली वस्तु है। यदि मनुष्य अपने संकल्प को श्रेष्ठ और शक्तिशाली बना सके तो उसके सांसारिक जीवन की कामनायें पूरी हो सकती हैं। इसका उपाय प्रेम या लगन है। चाहे वह वासनायें या कामनाएँ किसी तरह की हों, पूर्ण होंगी। ऋद्धि-सिद्धि शक्ति व अन्य सांसारिक व मानसिक सफलता का यही गुरु है। मानसिक शक्ति को बढ़ाने के लिए सिमरन ध्यान सिद्धान्त है जो कि विभिन्न धार्मिक ढंगों या तरीकों से, या सांइटिफिक ढंग से पृथक-पृथक रूप से किया जा सकता है। मगर चूँकि संकल्प उत्पन्न होता है

इसलिये एक समय के पश्चात् हर प्रकार का संकल्प अपना खेल समाप्त कर देता है। **जो उपजे सो बिनसे।**

इस संकल्प की दुनिया को संतों और शास्त्रों के मत में माया कहा गया है। यही कारण है कि हमारा संकल्प हमारी माया कहलाती है और कर्त्तार या प्रकाश का संकल्प ब्रह्माण्डी माया कहलाती है जिससे हमारा अपना व्यक्तिगत जीवन और यह सारा संसार बनता है और बन-बन कर टूटता रहता है। संत, महात्मा, ऋषि इस संकल्प के जगत में शिवसंकल्पमस्तु का ख्याल देते हैं। साथ ही इससे अलग होकर स्वतन्त्र रहने का आदेश करते हैं कि इस संकल्प के संसार में जीवन शिवसंकल्पमस्तु के ख्याल या भाव से खुशी और सुख से बिताया जाय और इसमें फँसा भी न जाये। वह उपाय यह है-

अपने अन्तर में प्रकाश रूप ज्योतिस्वरूप को, जो इस कर्त्तार का ही रूप है, प्रगट करो या उसका रूप हो जाओ। गायत्री मंत्र में भी यही संकेत है और इसी नियम पर हिन्दुओं में मरते समय मनुष्य के सामने दीपक या ज्योति जलाने का रिवाज़ है और अर्थी के साथ शंख बजाया जाता है ताकि मरने वाले का ध्यान अपने कर्त्तार की ओर जाये। यदि कोई व्यक्ति अपने जीवन में ही इस ज्योतिस्वरूप या शब्द को पकड़ ले तो उसका जन्म दुबारा इस माया देश में न होगा। यदि साधु और संत शब्द और प्रकाश में रहता हो तो उसका हित विचार शक्ति के बलवान होने के कारण दूसरे की सहायता कर सकता है, बशर्ते कि दूसरे में ग्रहण करने की योग्यता हो। शब्द और प्रकाश के मार्ग की व्याख्या संतों की वाणी से समझो अथवा किसी संत से मिलो। मेरे जिम्मे दाता ने यह फ़कीरों का काम दिया और कहा-

फुकर में उतरे साँच फ़कीरा, सब की करे भलाई।

मैं इसलिये सच की भलाई के लिये अपने अन्तर प्रकाश में ठहर कर यह आशा लिये रखता हूँ कि प्राणी मात्र को शान्ति मिले (Peace to humanity)। आप लोग भी जो साधु और संत सच्चे मानी में हैं यदि इस इच्छा को लें तो अपना कर्त्तव्य पूरा कर सकते हैं। मगर यह होगा तब, जब उसके बदले में आप कोई मान, सम्मान, धन, दौलत आदि न लें। संतों और साधुओं का बड़ा एहसान यह है कि वे हर प्रकार के भ्रम, संशय और शंकाओं से मुक्त करा देते हैं। वह कैसे करा देते हैं। अपनी रहनी के प्रभाव से। चूँकि वह स्वयं निर्द्वन्द्व अवस्था में रहते हैं उनके सत्संग से मनुष्य के जीवन में परिवर्तन हो जाता है। मुझ में परिवर्तन हुआ। अब यह दशा है।

ये ऐसी हालत में ज़िन्दगी गई, जहाँ मैं नहीं और तू नहीं।
कर्म भक्ति योग को त्यागा, सुरत निरत हो विस्माधि हुई।
जिस जगह पर रहन हमारी, न वहाँ ब्रह्म न माया रही।
जीवन मृतक-मृतक है जीवन, कुछ ऐसी हालत अपनी हुई॥
कर्म भोग या अपनाया मौजहुजूरी, काम किया है पर अलग रही।
दाता दयाल का हुक्म था सिर पर, सांवलेशाह ने भी आज्ञा करी॥
मौज से उनके बस हो के लिखारी, 'सारभेद' को दिया प्रकट करी।
जीव अनजान मेरी बात न समझें, ताते साधुओं संतों को कही॥

भावी जीवन या मृत्यु पश्चात् क्या हो, मौज जाने। इस समय जो अवस्था है वह वर्णन कर दी।

मेरी समझ में संत साधु या फ़कीर केवल जीवन का भेद बताते हैं और मनुष्य के संशय भ्रम और अज्ञान को दूर करते हैं। चूँकि इस रहस्य

की समझ शीघ्र नहीं आती, इसलिए सुमिरन ध्यान और भजन दिया जाता है कि वृती थिर होकर बात को समझ सके। यह भजन, ध्यान इष्ट पद नहीं है। इष्टपद तो शान्ति है या जीवन मुक्त अवस्था है।

इसलिए ऐ महात्माओं, सन्तों, साधुओ! आपने जो भिन्न-भिन्न टोलियाँ या दायरे बनाये हुये हैं, क्या यह मनुष्य को उसके अपने जानने और समझने के लिए हैं? इसका उत्तर आप स्वयं दे सकते हैं। उत्तर को भी प्रगट करने की आवश्यकता नहीं है, यदि है तो आप धन्य हैं। यदि नहीं, तो आँख खोलो और सच्चाई से काम करो। बस यही उद्देश्य इस 'सार भेद' के बताने का है। **– फ़कीर**

भेद-वाणी

साधो सहजै काया सोधो।
करता आप आपु में करता, लख मन को परबोधो॥ टेक॥

जैसे बट का बीज ताहि में, पत्र फल फल छाया।
काया मद्धे बुन्द बिराजै, बुन्दै मद्धै माया॥ १॥

अग्नि पवन पानी पृथ्वी नभ,ता बिन मेला नाहीं।
काजी पंडित करौ निवेरा, का के माहिं न साईं॥ २॥

साचे नाम अगम की आसा, है वाही में साँचा।
करता बीज लिये हैं खेते, त्रिगुन तीन तत पाँचा॥ ३॥

जल भर कुंभ जलै बिच धरिया, बाहर भीतर सोई।
उन का नाम कहन को नाहां, दूजा धोखा होई॥ ४॥

कठिन पंथ सत् गुरु को मिलना, खोजत खोजत पाया।
इक लग खोज मिटी जब दुविधा, ना कहैं गया न आया॥ ५॥

कहें कबीर सुनो भाई साधो, सत्त शब्द निज सारा।
आपा मद्धे आपै बोलै, आपै सिरजन हारा॥ ६॥

(2)

जो कोई या विधि मन को लगावै, मन के लगाये गुरु पावै॥ १॥

जैसे नटवा चढ़त बाँस पर, ढोलिया ढोल बजावै।
अपना बोझ धरै सिर ऊपर, सुरति बाँस पर लावै॥ २॥

जैसे भुवंगम चरत बनी में, ओस चाटने आवै।
कभी चाटै कभी मनि तन चितवै, मनि तज प्रान गंवावै॥ ३॥

जैसे कामिनि भरत कूप जल, कर छोड़े बतरावै।
अपना रंग सखियन संग राचै, सुरति डोर परलावै॥ ४॥

जैसे सती चढ़ी सत ऊपर, अपनी काया जरावै।
मातुपिता सब कुटुम्ब तियागै, सुरति पिया पर लावै॥ ५॥

धूप दीप नैवेद अरगजा, ज्ञान की आरत लावै।
कहें कबीर सुनो भाई साधो, फेर जनम नहिं पावै॥ ६॥

सारतत्व, सचाई और शान्ति

(ले० परमसंत परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज
मानवता मन्दिर, होशियारपुर (पंजाब)

प्रकाशक :

फकीर लाइब्रेरी चैरिटेबल ट्रस्ट (रजि.)
होशियारपुर (पंजाब)

प्रथम संस्करण : सं० 2027 वि०	द्वितीय संस्करण : सं० शाका 2015
सर्वाधिकार सुरक्षित	मूल्य :

॥ राधा स्वामी ॥

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देव महेश्वरः
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीः गुरुवे नमः

प्रार्थना

क्यों भरम में भूला है प्यारे, इस जगत में सुख बिसराम कहाँ।
जो आये हैं वह जायेंगे, रहने का नहीं है काम यहाँ॥ १॥

जो गये हैं उनका किसे पता, यह भेद मिला नहीं किसी को भी।
तुम जानते हो तो बता दो जी, सीता है कहाँ और राम कहाँ॥ २॥

झूँटे हैं नाम निशा झूँटे, जग झूँटा सब कुछ झूँटे हैं।
बस झूँट के गोरखधन्दे में, सत सारका सच्चा नाम कहाँ॥ ३॥

झूँटा सब सैर तमाशा है, झूँटा आनन्द हुलासा है।
जग जल के बीच बतासा है, गल गया तो धूम और धाम कहाँ॥ ४॥

ले नाम गुरु का तू भाई, संसार है यह अगमा पाई।
राधास्वामी की ले शरनाई, क्यों भटका आठों जाम कहाँ॥ ५॥

सारतत्व, सच्चाई और शान्ति

(मनाली-12-6-70)

सारतत्व (असलियत)

सन् 1905 ई० में जब मैं किसी वस्तु की खोज में रोया करता था तो एक दिन 24 घंटे रोने के बाद, एक दृश्य द्वारा दाता दयाल महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज के प्रात: 5 बजे दर्शन हुये। जहाँ से विश्वास हुआ कि वह मेरे लिये, जिस वस्तु को मैं चाहता था, उसके रूप का अवतार थे। उनको हर हफ्ते एक लिफाफा लिखा करता था। दस महीने के बाद आपने मुझे उत्तर दिया– 'फकीर तेरे पत्र मिलते हैं, मैं तेरी भावनाओं की कदर करता हूँ। मैंने सारतत्व (असलियत)' सत् (हकीकत) सच्चाई और शान्ति राधास्वामी मत में हुजूर महाराज राय सालिगराम साहब से प्राप्त की है। यदि तुम को इस रास्ते पर चलने से इंकार न हो तो तुम लाहौर आकर मुझ को मिल सकते हो।'

मैं उनके दरबार में गया। वहाँ उन्होंने 'सार वचन पद्य' पाठ के लिये दी। जब इनका माया समवाद पढ़ा, पाठ किया तो घबरा गया। क्यों? क्योंकि उसमें खंडन था। सब धर्मों को , वेदान्त और सूफी– इज्म सहित काल और माया रखा और संत मत को एक निराला और सबसे ऊँचा प्रगट किया। दातादयाल ने उस समय कहा कि फकीर! 'सार वचन' को छोड़ दो। फिर संत कबीर की शब्दावली और हुजूर महाराज का जीवन चरित्र पाठ के लिये दिया और नाम दान या नाम की दीक्षा दी। मैंने उस समय प्रण किया था कि इस रास्ते पर चलने से जो कुछ मुझ को मिलेगा

मैं संसार को बताता जाऊँगा। आज मेरी 83 वर्ष की आयु है। दाता दयाल के चोला छोड़ने के 31 वर्ष के समय में मानव जाति के कल्याण तथा निबल अबल अज्ञानी जीवों के भले के लिये और इस माया और काल के चक्र अर्थात् भवसागर से पार होने के लिये मैंने अपना निज अनुभव कहा और लिखा।

आजकल मैं मनाली की वादी, कुल्लू में हूँ। स्वास्थ्य के विचार से यहाँ आया हूँ। ख्याल आया कि यह चार शब्द हैं– असलियत (सारतत्व)हकीकत (सत्) सचाई और शान्ति जो दाता दयाल ने सन् 1905 ई० में मुझ को लिखे थे, इन पर अपना निज अनुभव वर्णन करूँ।

असलियत (सारतत्व)

असलियत क्या है? वास्तव में यह सारा संसार और मनुष्य क्या है? इसके ज्ञान का नाम असलियत है। मुझे इस का निज अनुभव कैसे हुआ या मैं क्या समझता हूँ कि असल क्या है और असलियत क्या है? वह कहता हूँ। जब से गुरु पदवी पर आया देश के भिन्न– भिन्न भागों से और विदेशों से लोगों ने मुझको लिखा कि मेरा रूप उनकी सहायता करता है जाग्रत में, स्वप्न में, अभ्यास में और मरते समय ले जाता है मगर मैं नहीं होता और न मुझे कोई पता होता है। तो मुझे यह निश्चय हो गया कि असल क्या है। असल है मनुष्य का अपना स्वरूप। मनुष्य स्वयं असल है। उसके अन्तर जाग्रत में, स्वप्न और सुषुप्ति में, तुरिया, तुरियातीत में जो कुछ प्रगट होता है अथवा सहस्रदल कँवल, त्रिकुटी , सुन्न, महासुन्न में प्रगट होता है वह बाह्य जगत् के प्रभाव हैं, संस्कार हैं, Suggetions हैं जो उसके दिमाग पर पड़ते हैं। उसका जो दिमाग है वह भी बाहर के सितारों, लोक लोकान्तरों की किरणों से प्राकृतिक रूप से , माँ बाप के कारण तथा खाद्य पदार्थ खाने के कारण होता है। असल

में यदि कोई वस्तु असल है तो वह है जो इस दिमाग में बैठकर इस समस्त बाहरी प्रभावों और दिमागी प्रभावों का भान करती है। इस बात का निश्चय हो जाना कि मनुष्य का अपना स्वरूप (जात) मुख्य है शेष सब गौण है, तो यह मेरी समझ में असलियत आई है।

मैं बचपन से उस मालिक को मिलना चाहता था जिसने यह सृष्टि बनाई है। अब जीवन के अनुभव ने मुझे यह सिद्ध किया है कि असली और सच्चा मालिक इस संसार में नहीं है। यदि कुछ यहाँ है तो यह प्रकृति, माया, स्थूल और सूक्ष्म पदार्थ। असली मालिक वह है जहाँ न स्थूल पदार्थ है न सूक्ष्म न कारण। जितनी भी रचना है वह इस रचना से बिल्कुल भिन्न है। न वह जन्मता है न मरता है, वह क्या है, क्या नहीं है, यह वर्णन नहीं हो सकता, बुद्धि में नही आ सकता। वह अनुभव में आता है कि वह है! है और अवश्य है! वह है आधार, कूटस्थ, जात मुतलक। मनुष्य की शक्ति या एनरजी जिसको सुरत कहते हैं, जब देह, मन प्रकाश और शब्द को छोड़कर उसकी खोज में ऊपर को हो जाती है वह उस मालिक की अंश है। मेरा ऐसा अनुभव है मगर कभी कभी मैं इस अनुभव को गलत भी समझता हूँ। क्यों? क्योंकि यदि मैं अर्थात् मेरी सुरत देह, मन और आत्मा से परे पहुँच कर वह हो सकती है तो फिर वह क्यों इस संसार में आती है। उसमें शक्ति होनी चाहिए यदि वह उस सर्वाधार की अंश है, तो किसी दूसरे को न सही, अपने शारीरिक, मानसिक और आत्मिक भान बोध पर इतना काबू हो कि वह इनको बदल सके। मैं कई बार सोचता हूँ कि सम्भव है मेरा अनुभव गलत हो। मैं वहाँ तक न पहुँचा हूँ मगर जब मैंने इन पिछले महापुरुषों के जीवन को देखा, पढ़ा जो संत-सतगुरु कहला गये तो वह भी अपने सांसारिक, मानसिक और आत्मिक अवस्थाओं को अपनी इच्छानुसार न बदल सके।

उदाहरण सुन लो- दाता दयाल महर्षि शिवव्रतलाल जी ने धाम बनाई, वह उनके जीवन में ही उजड़ गई। परिस्थितियों ने उनको विवश

किया और धाम छोड़ गये। बाबा सावन सिंह जो इतने बड़े डेरे के मालिक थे, संत सतगुरु कहलाते थे, पिछली आयु में शारीरिक कष्ट से अत्यन्त पीड़ित रहे। मुझे याद है कि सन् 1942 ई० में जब मैं इनके दरबार में गया, उन्होंने मेरे सामने सतसंग में कहा था कि मेरे बाद मेरा कोई भी रिश्तेदार डेरे की ओर नहीं देखेगा। किन्तु बाद में रिश्तेदारों के प्रभाव में आकर किसी न किसी ढंग से गद्दी अपने ही घर में रखने के लिये वे विवश हुये।

साहब जी महाराज पिछली आयु में दयाल बाग में प्रतिकूल परिस्थिति पैदा होने के कारण मद्रास चले गये। वहीं पर उनका शरीर छूटा।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने जिनके नाम के अब झण्ड़े लग रहे हैं पिछली आयु में गले में कैंसर के रोग से बुरी तरह पीड़ित रहकर चोला छोड़ा। शम्स तबरेज को जो मौलाना रूम के गुरु थे, पिछली आयु में शादी का शौक लगा। मौलाना रूम ने एक कनीज के साथ उनकी शादी करा दी। मौलाना रूम का लड़का उस कनीज पर मोहित हो गया और उसके हाथों से शम्स तबरेज मारे गये।

पलटू साहब बहुत बड़े संत कहलाते थे। वह यहाँ तक दावा कर गये-

साधोभाई! हम वहाँ के वासी, जहाँ पहुँचे नहिं अविनाशी।

और लिख गये कि संत ईश्वर की आज्ञा को टाल सकते हैं मगर स्वयं दूसरे साधाओं के हाथ से जिन्दा तेल के उबलते हुये कढ़ाही में जलाये गये।

गुसाईं तुलसीदास रामायण के रचियता पिछली आयु में तीन वर्ष शारीरिक दर्द से बड़े पीड़ित रहे।

स्वामी जी (सेठ शिवदयाल जी महाराज) स्वयं अन्तिम दिनों में दो वर्ष बड़े बीमार रहे।

ऐ भारतवर्ष के धार्मिक और पांथिक जगत के लोगो! मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊँगा । इस प्रजातंत्र राज में हर एक को अपना अनुभव कहने का अधिकार है इसलिये कह रहा हूँ।

असलियत क्या है? असलियत एक तत्व है। यह मानव बुद्धि के दृष्टिकोण से कह रहा हूँ। वह है इस बात का विश्वास रखना कि इस दुनिया का कोई आधार है और इस दुनिया में रहते हुये, चूँकि इस दुनिया का काम संकल्प के आधार पर है, कर्म के आधार पर है, कोई काम बिना नियम के नहीं होता , इसलिये यहाँ असलियत क्या है? यह कि मनुष्य अपने स्वार्थ व अपनी गरज के लिये किसी दूसरे मनुष्य को तंग न करे। उसका माल हड़प न करे। उसको दुख न दे। मैं ऐसा क्यों कहता हूँ? क्योंकि ऋषियों के अनुभव, संतों के अनुभव, बौद्ध और जैनियों के अनुभव कर्म की फिलोसफी को मानते हैं। यदि इन समस्त महापुरुषों को कुछ मिला– मान, बड़ाई , गद्दी , कष्ट तो वह उनके अपने कर्मों के अनुसार मिला।

देहरादून में संत कृपाल सिंह मुझ को मिले थे। मैंने उनको कहा था कि आपको मुझको या दूसरे महापुरुषों को जो यह मान मिला है, गद्दियाँ मिली हैं, धन मिला है यह हमारे पिछले कर्मों के कारण हैं। वर्तमान कर्मों के कारण नहीं है। मैंने क्यों कहा? यह शिष्य लोग अपने गुरुओं को धन दौलत देते हैं। उसके डेरा धाम बनाते हैं। क्यों ? क्योंकि उनका रूप उन लोगों के अन्तर प्रगट होता है। मरते समय ले जाता है। कोई बात कह देते हैं तो पूरी हो जाती है। मेरे अनुभव में आया है कि लोग मेरे बारे में यही कहते हैं मगर मैं सच कहता हूँ कि मैं

कही नहीं जाता। यह सब या तो मनुष्य का अपना विश्वास है या रेडीयेशन का नियम काम करता है। यह है असलियत जो मैं कहना चाहता हूँ। यदि किसी को असलियत का पूरा ज्ञान हो जाये और यह रहस्य उसकी समझ में आ जाये तो उसको शान्ति मिलेगी। यही शान्ति हुजूर महाराज राय सालिगराम साहब को मिली थी। वह अपने शब्दों में 'प्रेम वाणी' नामी पोथी में अपने सतगुरु राधास्वामी दयाल की प्रशंसा करते हुए लिखते है कि उनको स्वामी जी ने अनुभव कराया और अन्त में शान्ति दे दी।

घात माया ने की बहु भांति।
निरख दे बख्शी मोहि शांन्ति॥

मैंने इस अध्यात्म के लेविल (Level) को छोड़ कर इंसानियत की आवाज उठाई है। ऐ इंसान! इंसान बन! सच्ची समझ प्राप्त कर।

गुरु पशु नर पशु त्रिया पशु , वेद पशु संसार।
मानस ताही जानिये, जाहि विवेक विचार॥

* * *

सत (हकीकत)

दाता दयाल ने सन 1905 में मुझे लिखा था कि मैंने असलियत, सच्चाई और शान्ति पाई है। मैंने जो असलियत पाई वह वर्णन कर दी कि ऐ मानव! सब का मालिक एक है, परम तत्व है। इस पर विश्वास रखते हुये अपने मानसिक जगत को , संकल्प या विचार को मनुष्य श्रेष्ठ बना सकता है तो बना ले। बाह्य गुरु यदि कोई पूर्ण है तो तुम को शिव संकल्पमस्तु का सिद्धान्त बता देगा। यह असलियत मैंने वर्णन कर दी, अब रह गया सत(हकीकत):–

हक मुसलमानों का या उर्दू का शब्द है और सत हिन्दुओं का काया हिन्दी का शब्द है। इस सृष्टि में जो कि 'है' यह नहीं कि सृष्टि नहीं है।

यह सूर्य, चन्द्रमा सितारे हैं। कल्प-कल्पान्तरों से सृष्टि चल रही है। यह सृष्टि है। इस जगत में जो वस्तु काम करती है वह प्रकाश या नूर है और शब्द है, । हिन्दुओं में भी, मुसलमानों में भी, समस्त सम्प्रदायों और संतों में भी। फिर हक (सत) क्या है? शब्द और प्रकाश ही सत है। मनुष्य का आत्मा शब्द और प्रकाश स्वरूप है।

वह स्वयं सत (हक) है या सत का अंश है। मनुष्य का अपने शब्द और प्रकाश में रहना ही हकीकत या सत है। मेरे मन में यह सवाल आता है कि सत शब्द और प्रकाश में रहने का क्या लाभ है? लाभ यही है कि मनुष्य की सुरत (तबज्जह या आत्मिक धार) जो इस शारीरिक और मानसिक जगत में दुख और सुख उठाती है इससे उसको बचाव हो जाता है। मगर कब? जब वह शब्द और प्रकाश में रहता है। इसी को कहा जाता है ब्रह्ममय, सतमय। मेरा अपना जीवन मेरे सामने है। इस दुनिया में रहता हूँ । रोग भी आ जाता है, घरेलू झगड़े भी आ जाते हैं, सत्संगियों के झगड़े भी आ जाते हैं। चूंकि मुझे सत(हकीकत) और असलियत का ज्ञान है, मैं अपने आप को असलियत के नियमों के अनुसार अपने संकल्प को ठीक रखने की कोशिश करता हूँ। उससे मुझे भी लाभ होता है और दूसरों को भी होता है। साथ ही अपने-आप को शब्द और प्रकाश में रखने का प्रयत्न करता हूँ। और इस जगत में रहते हुये दुखों-सुखों से कम प्रभावित होता हूँ। यह सच्चाई है सत है। अर्थात शब्द और प्रकाश में रहते हुये एक तो यह लाभ है जो ऊपर वर्णन किया है। दूसरे यह आस रखता हूँ कि यदि मेरी सुरत का सम्बन्ध शब्द और प्रकाश से अन्तिम समय में रहे और जो मन है, संकल्पमय जगत है इसमें न फँसे , तो हो सकता है कि मैं शारीरिक या मानसिक जीवन में फिर न आऊँ। हिन्दू शास्त्र इसलिये शब्द और प्रकाश के साधन पर जोर देते हैं कि अंत समय में जो सुरत है जो उस असल का अंश है अर्थात मालिक का अंश है, वह इस आवागमन के चक्र से इस शब्द और प्रकाश के

साधन से बच सकता है। दावा नहीं करता कि अवश्य बच जायेगी। यह अनुभव है। कल्पना (Theory) है।

फिरा न मुलके अदम से कोई कि पूछूँ।
मुसाफिरो मंजिल पर क्या गुज़रती है॥

यह सत (हकीकत) है।

मैंने जो कुछ लिखा है, कहा है कि शब्द और प्रकाश में जाने से फिर आवागवन नहीं होगा। यही गरुड़ पुराण में लिखा हुआ है। यही हूजूर महाराज राय सालिगराम साहब ने लिखा है कि जिसको अन्त समय गुरु आकर ले जाता है उसको फिर मानव चोला शेष कमाई पूरी करने के लिये लेना पड़ता है। मेरा भी यही अनुभव है। क्यों ? लोग मरते समय कहते हैं कि बाबा फकीर अन्त समय में पालकी या हवाई जहाज लेकर आया है और उन्होंने राधास्वामी कहते हुये प्राण त्याग दिये और मुझे पता तक नहीं होता । इसलिये मैं ऐसा कहता हूँ कि राय साहब का अनुभव और गरुड़ पुराण का कथन ठीक है।

सच्चाई

मैं अपने-आपसे पूछता हूँ कि क्या है सच्चाई? सच्चाई कहते हैं किसी सत वस्तु को। सत वस्तु के प्रकट करने का नाम सच्चाई है। फिर सच्चाई क्या हुई? जो कुछ मैंने असलियत और सत (हकीकत) के बारे में कहा है उसका पूर्ण विश्वास हो जाना और फिर बुद्धि का किसी संशय भ्रम में न आना मेरी समझ में सच्चाई है। फिर सच्चाई क्या है? सचाई यह है कि एक परम तत्व है मालिक है जिसका केवल अनुभव हो सकता है। मैं अभी तक इस अनुभव से परे नहीं जा सका, उस परम तत्व के अन्दर से शब्द और प्रकाश स्वाभाविक रूप से पैदा होते रहते हैं और यह रचना होती रहती है। दुनिया कब से बनी है? कल्प-कल्पान्तरों से बनी है। क्यो कोई मनुष्य कोई महात्मा , कबीर, स्वामी जी, या गुरु नानक देव जी इस रचना के सम्बन्ध में पूरी तरह जान सके हैं या कोई

जान सका है और वर्णन कर सकता है? जितना जितना जिसका अनुभव हुआ उतना उतना उसने कह दिया। इस प्रकृति के रहस्य का पूर्ण ज्ञान किसी को नहीं मिला। जैसा जिसके अनुभव में आया उसी को सच्चाई कह दिया। इसलिये संतों ने कहा कि संतों के वचन पर विश्वास रखो। मुसलमानों ने कह दिया कि कुरान शरीफ पर विश्वास रखो। सिक्खों ने कहा गुरु ग्रंथ साहिब पर विश्वास रखो। हिन्दुओं ने कहा वेदों पर विश्वास रखो। इसलिये यह हर एक सम्प्रदाय वाले ने अपने अनुयायिओं को अपनी ही पुस्तकों पर या महापुरुषों के कथन पर विश्वास करने का आदेश दिया या शिक्षा दी मगर इस प्रकार के विश्वास ने भारत वर्ष में मानव जाति को भिन्न भिन्न सम्प्रदायों में बाँट दिया, सिर फटे और देश का विभाजन हुआ, हिन्दू मुसलिम झगड़े हुये। क्यों हुये? सच्चाई की गलत समझ के कारण।

मैं इस युग में अवतार लेकर आया हूँ। यह कहने के लिये कि ए मानव जाति! तू इस गलत प्रकार की सच्चाई के विश्वास के अनुसार जो तुझको हर एक धर्म, पंथ ने बताई और विवश किया कि तुम उनके कथन पर विश्वास करो। इससे मानव जाति की हानि हुई। मैं दावा नहीं करता। मैंने जो सचाई समझी है वह बताता हूँ कि ऐ मानव! तुझको जो कुछ मिलता है तेरे अपने ही संकल्प का फल मिलता है। यदि तू अपने संकल्प को ठीक कर ले, इस मन से घृणा, द्वेष, मत्सर, गैरियत निकाल दे और यह समझ ले कि कि हर एक व्यक्ति को उसको अपने ही विश्वास का फल मिलता है तो तू अपना विश्वास रख, दूसरों को अपना विश्वास रखने दे, क्योंकि सच्चाई का पूरा ज्ञान तो किसी को मिल नहीं सकता। न मुझको मिला न और किसी महापुरुष को मिला। सबने अपना अपना अनुभव कह दिया।

ऐ मानव! यदि तू सच्चाई पर चले कि तुझको जो कुछ मिलना है तेरे कर्म का फल मिलता है तेरे संकल्प का फल मिलना है तो इस काल और माया की रचना में विभिन्न प्रकार के विश्वासों के होते हुये हम लोग आपस में भाई-भाई बन कर रह सकते हैं। यह इस दुनिया में असम्भव

है कि सारी दुनिया एक ही विश्वास की हो जाय। जलवायु, जन्म के संस्कार, माँ बाप के विचार और भोजन, बाह्य धार्मिक और पोलीटिकल प्रभाव भिन्न- भिन्न होने से संसार एक लाइन पर नहीं आ सकता । यह है सच्चाई जो मैंने समझी है।

शान्ति

शान्ति क्या है? मन का विचारों का विक्षेप न होना। क्यों और कैसे? भावों का न उठना और उस एक अवस्था में आ जाना जिसको भ्रम संशय रहित कहते हैं। प्रश्नोंत्तरों से बरी। जो हमारा जीवन है उसका उस अवस्था में रह कर व्यतीत करना ही शान्ति है। यह जब मिलेगी साधन और सत्संग से मिलेगी। साधन नाम है , शारीरिक, मानसिक और आत्मिक अवस्थाओं का अनुभव करना और सत्संग नाम है अपने अनुभव का समर्थन हो जाना। मुझको जो कुछ मिला , शान्ति व अनुभव यह दाता दयाल की दया है मगर उन लोगों से मुझको शान्ति मिली जिन्होंने मुझे यह कहा कि मेरे रूप ने उनकी जाग्रत, स्वप्न और समाधि तथा मरते समय सहायता की। मैं तो था नहीं, इससे मुझको ज्ञान हो गया कि जो कुछ भी किसी को मिला, उसको अपने संकल्प, विश्वास , श्रद्धा या अपने कर्म का फल मिला। इस अनुभव ने मेरे अन्तर में वह जो क्यों और कैसे के प्रश्न उठते थे वह समाप्त कर दिये। अब मैं अपने मन के चक्र में, जहाँ तक सम्भव होता है, इस समझ के आधार पर फँसता नहीं और मुझको इस अनुभव से मानसिक शान्ति मिली। शारीरिक शान्ति के लिये जब कभी बीमार होता हूँ तो दवा खाता हूँ। उस दवा से मेरा रोग कम या दूर हो जाता है तो शारीरिक शान्ति के लिए स्वास्थ्य के नियमों का पालन और डाक्टरी या वैद्य के अनुसार दवा करना है।

रह गई आत्मिक शान्ति.....आत्मा प्रकाश और शब्द स्वरूप है। यदि कोई आत्मिक शान्ति चाहता है तो उसके लिये आवश्यक है कि वह सुमिरन, ध्यान और भजन करता हुआ अपने अन्तर शब्द और प्रकाश को प्रकट करे जो उसका अपना ही रूप है। मुझे जिन कारणों से

शक्ति मिली,वह बताता हूँ। इसके आगे एक और अवस्था है जिसका नाम है परम शान्ति। उसका अनुभव है मगर अभी तक उसमें ठहरा नहीं जाता। वह परम शान्ति अपने व्यक्तित्व को खोकर वह जो असल स्वरूप है उसमें लय कर देना। मुझको यह अनुभव हुआ है कि यह जो कुछ भी मैंने लिखा है इन सब पर विजय पाने के लिए मेरा अपना अनुभव कहता है कि या तो उस मालिक की मौज है या अपने कर्म हैं तो यह भी किसी और शक्ति के आधीन है। इस मौज के समझ आ जाने पर कि यह सब कुछ किसी और शक्ति के आधीन है दुनिया में रहता हुआ ऊँच-नीच से मुठभेड़ करता हुआ या जो उसकी मौज का विचार मुझ को आ गया यह मुझको शान्ति देता है।

गुरु की मौज रहो तुम धार।
गुरु की रजा सँभालो यार॥

नोट—मुझे प्रतीत (महसूस) होता है कि जो लोग अभी तक साधन अवस्था में है और जिनको कोई पूर्ण गुरु नहीं मिला है वह मेरे इन लेखों को पढ़कर खींचतान में अवश्य रहेंगे। मेरे लेख हंसों, परम हंसों, साधुओं, योगियों और संतों के लिये हैं अथवा उनके लिये हैं जिनका दिमाग विकसित हो चुका है। प्रारम्भिक अवस्था वाले जिस-जिस मार्ग पर चल रहे हैं चलते रहें। मैंने यह काम इस समय मौजूदा गुरुइज्म और गुरुओं की हिदायत के लिए किया है। बुरा न मानिये। मेरी समझ में आया है कि इस समय का जितना गुरुइज्म है या पंथ, धर्म, कर्म है यह जीवों के हित के लिये नहीं है किन्तु इन पंथों, समुदायों और आचार्यों के अपने स्वार्थ अपने हित के लिए हैं। ऐसी दशा को देखकर मौज ने मेरे दिमाग को हिलाया और मैंने गुरु ऋण से उत्तीर्ण होने के लिए अपने निज अनुभव के आधार पर जो बात दाता दयाल ने मुझको सन् 1905 में लिखी थी वह वर्णन कर दी।

सर्वव्यापकता

(मानवता मन्दिर, होशियारपुर 9-6-70)

दाता दयाल (महर्षि शिव) के यह शब्द पढ़े गये –

जो जहाँ शामिल है सब हरकात और सकनात में।
यह समझ लेना वह शामिल है तुम्हारी जात में॥

जर्रा-जर्रा कतरा-कतरा में हुआ है वह मुहीत।
वह नफी में भी है पिनहा जाहिर है वह असबात में॥

दूर से है दूर और नज़दीक से नज़दीक तर।
तुम में है हरकत उसी की शामिल तुम्हारी बात में॥

अक्ल से और दिल से कब कोई पता पाने लगा।
लाख कोशिश करने पर भी आता नहीं है हाथ में॥

.....

जो हुआ मुहताज गैरों का वहकब इन्सान है।
वह है हैवानों से है बदतर क्योंकि वह नादान है॥

आदमी में आदमियत चाहिये यह है उसूल।
आदमियत से जो हो खाली वह बेसरो सामान है॥

उसमें हिम्मत हौसला हो अज्म में साबित कदम।
हो फराखी दिल को हासिल, तब बशर जी शान है॥

जिसमें है मुहतागी होगा जमाने में जलील।
काबिले रुतबा है जिसमें बढ़ने का अरमान है॥

गैर मुमकिन को करे मुमकिन बशर की यह सिफत।
आलमे इमकान में हर बात का इमकान है॥

पहिले शब्द की पहिली कड़ी में वह कहते हैं कि जितनी हरकतें (गति) और सकनात (ठहराव) दुनिया में हैं सब में वह मालिक मौजूद है मगर यह विश्वास हो सकता है और कुछ नहीं।

दूसरी कड़ी– नफी (नेति) और असबात (ऐति) क्या है? वेद कहते हैं ऐति। कोई कहता है नेति। दाता का यह भाव है। जो अर्थ मैं समझता हूँ वह इन दोनों में छुपा हुआ है।

अब मेरी समझ में यह नहीं आता कि ऐती (असबात) का विश्वास किसको आये? कैसे आये? कि वह हर जगह है। इसका कोई विश्वास होना चाहिये। किसी के कहने से तो कोई आदमी उस अवस्था में नहीं आ सकता। मैं स्वयं नहीं आया। इसलिए ऐसा कहता हूँ। कह देने को तो सभी कहते हैं कि भगवान सब जगह है। मगर यह मान जाने से क्या वह जो उसके अन्दर कुरेद है या किसी वस्तु की खोज है क्या वह समाप्त हो सकती है?

एक आदमी को यह विश्वास है कि वह शक्ति गति में भी है और ठहराव में भी है। ऐति में भी है और नेति में भी है मगर क्या उसके अन्तर ठहराव आता है? यह अमली पहलू (क्रियात्मक रूप) का सवाल है। जितने इस संसार में खुदा, ईश्वर, परमात्मा या गुरु के पुजारी हैं वह अपनी आत्मा से अन्तर दाखिल होकर पूछें। बीमारी आती है, कष्ट आता है। क्या कोई ऐसा आदमी है जो बीमारी की दशा में से बचना नहीं चाहता? जब वह बचना चाहता है तो उसका अर्थ यह है कि वह बीमारी में भी जो वह परम शक्ति है उसका उसको विश्वास नहीं है। मैंने अपने आपको संत सतगुरु कहा है– सत ज्ञान दाता। शायद मेरा दिमाग खराब हो। जो व्यक्ति उस मालिक को हर वस्तु में मानता है गति में मानता है ठहराव में मानता है, ऐति और नेति में मानता है मैं उससे यह पूछना चाहता हूँ कि जब तुमको बीमारी आती है तो तुम दवा क्यों खाते हो?

तुम्हारा दवा का खाना यह प्रमाण है कि तुमको यह विश्वास नहीं है कि बीमारी में भी वह है। इसका अभिप्राय है कि जो सर्व व्यापक की भक्ति करने वाले हैं कि हर जगह परमात्मा है वह अमली पहलू (क्रियात्मक रूप) से गलत है। चोर जब डाका मारता है तो उस घर वाला चोरों का सामना करता है। यदि वह हर जगह मौजूद है तो चोर में भी वही है। इसी तरह पागल में भी वही है, साँप में भी वही है, शेर में भी वही है, तो वह उससे बचना क्यों चाहता है!

दाता दयाल तो इस शब्द में कहते हैं कि वह हरकात (गति) और सकनात (ठहराव) में है। जब है ही वही तो जिसको यह निश्चय हो गया कि वही है तो शेर के सामने से भागेगा नहीं। जब बीमारी आयेगी तो इलाज नहीं करायेगा। यदि क्रियात्मक रूप से यह मानता है कि हर वस्तु में मालिक है, यह तो तर्क की बात है।

जर्रा जर्रा कतरा कतरा में, हुआ है वह मुहीत।
वह नफी में भी है पिनहाँ, जाहिर है वह असबात में॥
दूर से है दूर और नजदीक से है नजदीक तर।
तुम में हरकत उसकी, शामिल तुम्हारी बात में॥

अच्छा! यदि वह हमारी बात में शामिल है तो जब एक आदमी किसी का अपमान कर देता है, गाली देता है तो फिर उसे क्रोध क्यों आता है। मैं हूँ रिसर्चर! मालिक को मिलने को निकला था। मालिक कहाँ है?

'हाँ' 'नहीं' इन्कार और, इकरार तक में है वही।
जिसको देखो वह गुथा, रहता है उसके साथ में॥

यह ठीक है मगर यह जो समझ है कि वह हर जगह है उसको क्रियात्मक रूप में लाना सरल काम नहीं। जहाँ तक मेरा निजी अनुभव है और मैंने इन संतों को देखा है दाता दयाल, बाबा सावन सिंह साहब

जी महाराज तथा दूसरे महात्माओं को यह शिक्षा केवल मानव बुद्धि को केवल बुद्धिगत सन्तुष्टि देती है। यह शब्द वेदान्त पर है इसलिए मैं कहता हूँ कि क्रियात्मक रूप (अमली पहलू) से अधूरा है। तर्क-वितर्क और बात है। जब किसी पर आपत्ति आ जाती है, दुख आ जाता है तो यह ज्ञान जो वेदान्त देता है यह क्रियात्मक रूप से शान्ति नहीं देता। जो मेरे लेख को पढ़े वह सोचे कि मैं गलत हूँ या ठीक कहता हूँ। एक आदमी मानता है कि भगवान् कण-कण में है तो जब साँप आ जाता है तो भागता क्यों है? इस लिये यह वेदान्त के विचार मनुष्य को केवल बुद्धिगत सन्तुष्टि देते हैं। वह स्थान या अवस्था और है जहाँ जाकर इस संसार के भय, डर, रोग से बचाव का अन्त होता है।

अल्क से और दिल से कब कोई पता पाने लगा।
लाख कोशिश करने पर भी आता नहीं है हाथ में॥

तो क्या सिद्ध हुआ? यही कि बुद्धि से ऐसा मान लेना कि वह हर जगह में है, रहनी या क्रियात्मक रूप से मनुष्य को शान्ति या सन्तुष्टि नहीं दे सकता। दातादयाल ने लिख तो दिया मगर पीछे से बात सच्ची कह दी। फिर इसका इलाज?

जो हुआ मुहताज गैरों का, वह कब इन्सान है।
वह है हैवानों से बदतर, क्योंकि वह नादान है॥

उस अवस्था में मनुष्य को इन सब वस्तुओं, ऐति नेति, गति और स्थिति, वह जो केन्द्र है पूर्ण है जिसको मनुष्य का असली रूप कहा जाता है, का अनुभव होता है। जब तक कोई आदमी अपने शरीर और मन के भान बोध का दास है दूसरे शब्दों में जब तक वह शरीर और मन में है वह इनकी दासता से बच नहीं सकता। सम्भव है दातादयाल बच गये हों, हुजूर बाबा सावनसिंह, स्वामी जी महाराज बच गये हों, मुझे पता नहीं।

मेरे अनुभव में मनुष्य-शरीर में रहते हुये कौन संत या परमसंत है जिसको प्यास नहीं लगती और पानी को मुहताज (आश्रित) नहीं? कौन संत या परमसंत है जिसके शरीर में दर्द हो और वह उससे बचना नहीं चाहता। भूख लगती है। क्या वह रोटी खाने का आश्रित (मुहताज) नहीं है? कोई अवतार भूख के बिना रहा हो, प्यास के बिना रहा हो तो मुझे बता दो। कोई रह नहीं सकता। इसलिए संतों का मार्ग है। जब तक कोई मन और आत्मा से परे नहीं चला जायेगा, वह बिना आश्रित हुये या मुहताजगी के हो ही नहीं सकता। मैं ऐसा इसलिए कहता हूँ कि मैं नहीं हो सकता क्योंकि दूसरों को कहूँगा तो दूसरों को क्रोध आयेगा। इसलिए संतों के मार्ग में अभ्यास है, चौथे पद की शिक्षा है कि जब तक मनुष्य देह, मन और आत्मा से परे नहीं जाता वह इस परवशता से बच नहीं सकता। मनुष्य है भी वही, जिसको पूर्ण पुरुष कहा जाता है जो चौथे पद का वासी है। इसलिए संतों ने जीव को अपने घर जाने का पता दिया है- चौथे पद का। भाई! यह शरीर, मन और आत्मा तीनों ही काल माया के चक्र में हैं। यहाँ तो परवशता (मुहताजगी) रहेगी। जब तुम इसमें हो, दुख-सुख, भूख, प्यास से बच नहीं सकते। बड़े-बड़े संत भी बच नहीं सके। तो संत मत की शिक्षा है चौथे पद की। जो चौथे पद में रहता है, जिसकी सुरत, देह, मन और आत्मा को छोड़ कर वहाँ जा सकती हैं, जब तक वह वहाँ है उस समय तक वह किसी वस्तु के आधीन नहीं है। यह मेरा अनुभव है। इतनी बात अवश्य हो सकती है कि जिसको ज्ञान है वह जो आवश्यकता उसके अन्दर शारीरिक, मानसिक या आत्मिक पैदा होती है उसके वश में आकर वह अधिक हाय-हाय न करे, अधिक घबराये नहीं। यह मेरे साथ होता है। यदि कोई कहे कि शरीर में रहता हुआ मनुष्य इस आवश्यकता से बरी रह सकता है तो मुझ से तो रहा नहीं

जाता और न मैं समझता हूँ कि कोई महात्मा रहा हो। मैंने संतों के जीवन देखे हैं। हर जगह हाथी के दाँत खाने के ओर है तथा दिखाने के ओर हैं। पब्लिक के सामने यह संत किसी और रूप में प्रगट होते हैं और उनकी अपनी रहनी को वह आप जानते हैं।

मेरे अन्तर किसी वस्तु की कुरेद थी। ढूँढता चला आ रहा हूँ। सुबह अभ्यास में था। चूँकि तुम सत्संगियों से जब से पता लगा कि मेरा रूप तुम्हारी सहायता करता है और मैं होता नहीं, तो फिर उस असली मालिक को, उस असली स्वरूप को जो मन और बुद्धि से परे हैं, उसकी खोज करता हूँ। वह कहाँ मिलता है? मन बुद्धि से परे। मन बुद्धि का सम्बन्ध दसवें द्वार तक है अथवा निर्विकल्प समाधि तक है। वह उससे आगे हैं। अब जो मेरा साधन है वह दसवें द्वार या सोहंग के आगे से शुरू होता है, नीचे की श्रेणियाँ जितनी थीं– सहस दल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न, यह सब मेरी छूट गईं। केवल इस ख्याल से कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता, मुझे विश्वास हो गया कि मेरे अन्तर भी जितने रूप प्रगट होते थे, वह, वह नहीं थे जो मैं समझता था। फिर असली मालिक की खोज में मैं रात-दिन चलता रहता हूँ और वह है शब्द और प्रकाश का भंडार। उसके परे हैं जिसको निज स्वरूप कहते हैं।

आदमी में आदमियत चाहिये यह है उसूल।
आदमियत से जो हो खाली, वह बेसरो सामान है॥

यह आदमियत या मनुष्यता क्या हुई? सच्ची समझ का नाम ही आदमियत है जो मैंने समझा है। मनुष्य कब बनता है मनुष्य, जब उसको यह ज्ञान हो जाता है कि जितने यह निचले दृश्य हैं यह सब काल और माया के हैं।

तुम बाबा फकीर का अपने अन्तर में रूप बनाते हो। तुम उसके मुहताज (आधीन) हो। यदि बाबा फकीर का रूप प्रगट हो गया तो तुम को खुशी मिल जाती है, यदि नहीं हुआ तो तुम दुखी हो जाते हो, आज गुरु के रूप का दर्शन तुम्हें नहीं हुआ तो तुम उसके आधीन हो। आदमी नहीं हो, जब तक तुम्हारे अन्दर गुरु का रूप प्रगट नहीं होगा तुम्हें शान्ति नहीं मिलेगी। तो यह जितने योगी, ध्यानी, कर्मकाण्डी हैं यह सब के सब मनुष्य नहीं है क्योंकि यह आश्रित है, अपनी शान्ति, अपने सुख और अपनी सन्तुष्टि के लिए कोई मन्दिर का मुहताज (आश्रित), कोई बाबा फकीर का मुहताज, कोई अयोध्या का, कोई मक्का शरीफ के आधीन है। तो संतों ने इस आधीनता को दूर करने के लिए हम लोगों को नाम दिया था। वह नाम अपना ही नाम है निज स्वरूप।

राधास्वामी निज स्वरूप।
गोता मार तन के कूप॥

बात बहुत ऊँची कह रहा हूँ। क्या कोई मनुष्य है जो किसी के आधीन न हो। तुम स्वयं आधीन हो जो मेरे दर्शनों को आते हो। सोचते हो आज बाबा फकीर के दर्शन करेंगे कृतार्थ हो जायेंगे। मेरे दर्शनों से तुम को कुछ नहीं मिलेगा। यह तुम्हारा अपना ही विचार है। मेरे दर्शन से सब तर जाते तो कितने ही आदमी तर गये होते। दूसरी गद्दी वालों को देखो। वे जब मुझे देखते हैं तो उनको आग लग जाती है। उनको क्रोध आ जाता है। यदि मेरे ही दर्शन में सब कुछ होता तो उनको क्रोध क्यों आता। इसलिए सत्संग की महिमा है। किसी पूर्ण पुरुष चौथे पद के वासी के सत्संग से तुम मनुष्य बनोगे। स्वतंत्र बनाये जाओगे। फिर किसी की आधीनता में न रहोगे। कोई राम के आधीन, कोई कृष्ण के, कोई बाबा फकीर के, कोई मंदिर या मसजिद के, कोई बुद्ध के, कोई गुरु नानक के आधीन। जब तक आधीनता है या दूसरे पर निर्भर हो, तब तक तुम को परम सुख या परम शान्ति नहीं मिल सकती।

उसमें हिम्मत हौसला हो, अज्म में साबित कदम।
हो फराखी दिल को हासिल, तब बशर जी शान है॥

हिम्मत और हौसला– मैंने 7 वर्ष की आयु में अज्म या संकल्प किया था उस मालिक से मिलने का। बहुत से कष्ट सहे। प्रयत्न चलता रहा। हिम्मत नहीं हारी। यह तो है परमार्थ। यही दशा दुनिया की वस्तुओं की है। जो व्यक्ति दुनिया में साहस और इरादे से काम नहीं करता उसको दुनिया का भी सुख नहीं मिल सकता। दो मार्ग है– एक दुनिया का और एक परमार्थ का। मैं परमार्थ का अनुयायी हूँ मगर युवा बच्चों को, दुनियादारों को परमार्थ की शिक्षा नहीं देता क्योंकि उनका अभी समय नहीं आया है। युवकों के लिए दाता दयाल की शिक्षा है साहस और संकल्प। I wish, I will, I can. यह शिक्षा दुनिया को मिलती है। स्कूलों में भी यही कहते हैं। जो व्यक्ति उत्साह से अपने सांसारिक जीवन को उच्च नहीं बना सकता वह परमार्थ को भी प्राप्त नहीं कर सकता। परमार्थ प्राप्त करने के लिए बड़े उत्साह और साहस की आवश्यकता है। शरीर और मन को छोड़कर दसवें द्वार या निर्विकल्प समाधि से आगे जाना सरल नहीं है। मनुष्य उस समय जायेगा जब उसको मालिक से सच्चा प्रेम हो और सच्ची लगन हो।

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
शीश काट पग तल धरे, तब बैठे घर माहिं॥

यह परमार्थ है मगर स्वार्थ में भी दाता दयाल के शब्द स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य हैं –

उसमें हिम्मत हौसला हो, अज्म में साबित कदम।
हो फराखी दिल को हासिल, तब बशर जी शान है॥

दुनिया के कामों में संकल्प, साहस और उत्साह की आवश्यकता है। दुनिया के कामों में तब ही तुम सफल हो सकते हो। स्कूल में पढ़ते

हो तो इरादे और साहस के काम लो। मैं परमार्थ की ओर गया हूँ। दुनिया के कामों में भी मैंने इरादे और हिम्मत से काम किया है। मेरा सांसारिक जीवन बड़ा सफल रहा है। मेरे पास चर्चिल (मुख्य मंत्री इंगलैंड) के सर्टीफिकेट हैं और किंग जार्ज के सर्टीफिकेट हैं और रेलवे की नौकरी के समय के वायसराय के सर्टीफिकेट हैं। क्यों? क्योंकि मैंने उत्साह, साहस और इरादे से काम किया है। यह तो दुनिया है। परमार्थ में देह, मन की परवाह न करके केवल अपने घर, अपने आदि घर को ढूँढने के लिए निकला था। साहस था उत्साह था।

जिसमें है मुहताजगी होगा जमाने में जलील।
काबिले रुतबा है जिसमें बढ़ने का अरमान है॥

अब तुम देखो कि जिनको परमार्थ की मुहताजगी (आधीनता) है, गुरु की बात को तो समझा नहीं, वे जीवन भर गुरु के दरबार में जाकर नाक रगड़ते मर गये। गुरु महाराज से आगे साष्टांग दण्डवत करते रहे। किसी के आश्रित होना क्या यह अपमानित होना नहीं है। लम्बे पड़ के गुरु को मत्था टेका क्या गुरु की पूजा नहीं है। गुरु की सेवा है गुरु की बात को सुनना, गुनना, मनन करना और उस पर अमल करना। शेष हमारी सभ्यता है नमस्कार करना, प्रेम करना, सेवा करना। अब यहाँ तो नमस्ते करते हैं। कोई सत श्री अकाल कहता है। अंग्रेज और तरह से सम्मान करते हैं। जनसंघ वाले किसी और तरह से ध्वजा का सम्मान करते हैं। यह अपने अपने रस्म और रिवाज हैं। एक तो परमार्थ में अपमानित होना है, एक दुनिया में अपमानित होना है। तुम नौजवान बच्चे हो। तुम्हारे हाथ पाँव हैं। स्वयं नहीं कमाते। बाप या भाई पर निर्भर हो। फिर तुम अपमानित नहीं होते तो क्या होते हो? एक उदाहरण देता हूँ–

जब मैं निर्माण (Construction) लाइन से वापिस आया तो गवर्नमैंट सर्विस के लिए प्रार्थना पत्र भेजा हुआ था। दशहरा आ गया। मुझ को भी

भक्ति का शौक था। तो यह भावना उठी कि मैं भी चार आने के फूल लेकर राम के गले में यानी जो राम का भेष बनता है, उसको फूल चढ़ाऊँ और चार आने से मत्था टेकूँगा। मैं घर आया बड़े चाव से। मैंने कहा– माँ! माँ!! अठन्नी देदो। उसने कहा बच्चा! मेरे पास तो है नहीं, तेरे पिता जी आवेंगे, ले लेना।

अब पिताजी आ गये। मैंने बड़े चाव से कहा– पिता जी! अठन्नी दे दो। उन्होंने कहा क्या करोगे? मैंने कहा कि चार आने के फूल चढ़ाऊँगा और चार आना भेंट दूँगा। कहने लगे दो पैसे ले जा बच्चा। एक पैसे से मत्था टेक देना और एक पैसे के फूल चढ़ा देना। मैंने कहा मैं तो आठ आना लूँगा। पिताजी गाली देकर बोले कि तेरी स्त्री बीमार पड़ी है। फिरता है मुसंडा। न काम करता है न काज करता है। पैसे माँगता है। जा, चला जा। मेरे पास पैसे नहीं है। कहाँ से लाऊँ। उनके शब्दों ने मेरे हृदय को चोट पहुँचाई। मैंने कहा घर से निकल जाऊँगा। पिंड दादन खाँ का बड़े कोट में मकान था। कोठे पर सीढ़ियों पर चढ़ा। छलांग मार देता। माँ–बाप दौड़े आये। मुझे पकड़ ले गये। पिताजी ने कहा– बच्चा! मैने सच्ची बात कही। तेरी स्त्री बीमार है। इसका इलाज कराता हूँ। मेरे पास पैसा नहीं है। यह ले रुपया ले जा। मैंने कहा कि मैं नहीं लूँगा।

मेरी स्त्री थी रामरिखी वह बीमार थी। पाँव में नासूर था। उसने मुझे बुलाया। बोली मैंने 40 रुपये के पैसे इकट्ठा करके रखे हुये हैं। मेरी सन्दूक में पड़े हैं। यह लो चाबी। जितने चाहो ले जाओ। मैंने कहा मैं नहीं लूँगा।

मेरे पास एक पुस्तक (Character by Smile) थी। जिसका लेखक इस्माइल था वह 1.25 रू. की मैंने खरीदी थी। वह आधे दामों पर बेच दी। चार आने राम के भेंट चढ़ाये और चार आने के हार चढ़ाये।

जब दशहरा सम्पन्न होने पर रावण को आग लग गई, शाम को जब घर आया तो रास्ते में गली पड़ती थी। वहाँ मुझे कोई नहीं देखता था। वहाँ जमीन पर दोनों घूटने टेक कर कहा– ''हे राम! मुझको जीवन में किसी के आगे हाथ फैलाने का अवसर न देना।'' आज दिन तक जीवन बीत गया। मैंने बाप की कमाई नहीं खाई। मकान है जमीन पड़ी है। उसका किराया दस रुपये आता है। मैं नहीं लेता। मुंशीराम को दे देता हूँ यह है स्वाभिमान। जहाँ मेरी शिक्षा अध्यात्मक है वहाँ युवक वर्ग को शिक्षा देना चाहता हूँ कि ऐ युवको! दुनिया में अपमानित होने की आवश्यकता नहीं है। अपने पाँव पर खड़े होकर अपनी रोटी आप कमाने का आप प्रबन्ध करो। थोड़ी आमदनी है तो थोड़े में गुजारा करो। बहुत है तो बहुत में गुजर करो। अपमानित या जलील मत हो। परमार्थ की दृष्टि से भी गुरु के आगे टें टें मत करो। गुरु के सत्संग में बैठकर गुरु की सेवा यही है कि गुरु की बात को सुनो, समझो और गुनो। स्वामी जी का कथन है–

दर्शन करे वचन पुनि सुने।
सुन सुन कर नित मन में गुने॥
गुन गुन काढ़ि लेय तिस सारा।
काढ़ि सार तस करे अहारा॥

जलील बनना ठीक नहीं है। मैं जीवन में सांसारिक दृष्टि से जलील नहीं बना। जब ज्ञान नहीं था तब दूसरे ढंग से दाता दयाल से प्रेम करता था। यह ज्ञान सन् 1919 से हुआ है। सन् 1919 के बाद मैंने दाता दयाल की सेवा की, यहाँ तक कि अपनी स्त्री के जेवर भी बेच कर वहाँ लगा दिये। उसकी मुझे खुशी है मगर वह जलालत नहीं थी। वह उनका अहसान था। यह है शिक्षा दाता दयाल की।

गैर मुमकिन को करे मुमकिन बशर की यह सिफत।
आलमे इमकान में हर बात का इमकान है॥

मनुष्य असम्भव को सम्भव बना देता है। चन्द्रमा पर चढ़ गया। ऋषियों के जो ग्रन्थ लिखे हुये थे वह मिथ्या (Condemn) हो गये। वह मनुष्य का गुण है। ऐटम बम बन गये। दो बम फेंक दो। सारा भारत नष्ट हो जायेगा। यदि यही मनुष्य बजाय विनाश के अपने विचार उपयोगी कार्यों की ओर ले जाये तो यही बुद्धिमान मनुष्य दुनिया में शान्ति ला सकते हैं मगर यह लाते नहीं। क्यों नहीं? क्योंकि इनको गुरु नहीं मिला। गलत रास्ता ग्रहण कर रहे हैं। मैं इसी दृष्टि से काम करता हूँ। मैंने मानवता मन्दिर की नींव रखी। वह केन्द्र है। नई चीज़ पैदा की। एक काम एक सौदा सिर पर लिया। बस उसको निबाह जाना चाहता हूँ। पीछे मेरे काम का क्या परिणाम निकले इसका पता नहीं है मगर मैंने इन्सानियत से काम लिया है। आज सत्संग था मनुष्य की श्रेष्ठता पर। जो मनुष्य ईश्वर के भी आधीन है वह मनुष्य नहीं है।

पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।
कर विचार देखउ मन माहीं॥

पराधीन होना ठीक नहीं। भरत भूषण! तुम युवक हो। इरादा रखो। दाता दयाल कहा करते थे पहिले ब्रह्म बनो अर्थात् बढ़ो। जिसने दुनिया की उन्नति नहीं की वह आध्यात्मिक उन्नति नहीं कर सकता। एक बात कहे देता हूँ कि आत्मिक उन्नति में मन को वश में करना है जो बहुत कठिन संकल्प है। दुनिया उन्नति जो है वह संकल्प है बस यही संदेश है।

परम शान्ति

प्रवचन 31-5-70 अमृतसर

मैं पिछले महीने भी यहाँ आया था और जो कुछ मेरे जीवन का अनुभव था। चूँकि मुझ को मेरे अनुभव ने सिद्ध किया कि राधास्वामी मत या संत मत की शिक्षा से मुझे शान्ति मिली है इसलिए मैंने उसकी प्रशंसा की।

मुझे एक चिट्ठी यहाँ से गई। कोई अमरजीत सिंह है उन्होंने मुझे को लिखा कि मैंने आपका सत्संग सुना। आप अपने आपको संत सतगुरु कहते हैं। मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ। मैं कहता हूँ कि कोई संत सतगुरु हो तो वह कहता कि मैं संत सतगुरु हूँ। कबीर ने कहा है-

मैं आदि घर का भेदी लाया हुकम हुजूरी।

ऐसा शब्द है। सतगुरु किसे कहते हैं? सतगुरु नाम है सच्चे भेद का, सच्चे ज्ञान का। यह भेद कोई महात्मा देता नहीं। सारी दुनिया को अपने जाल में फंसाया हुआ है। आज मैं वह भेद देना चाहता हूँ। इसका अर्थ यह नहीं कि जो मुझे पूजेगा, मुझे मत्थे टेकेगा, रुपया देगा, वह तर जायेगा किन्तु यह कहता हूँ कि जो मेरी बात को समझेगा, वह रहस्य को समझेगा, वह लाभ उठायेगा।

वह भेद क्या है? गुरु की डयूटी क्या है? वह भेद देता है, ज्ञान देता है। राधास्वामी दयाल की बाणी है-

गुरु ने दीना भेद अगम का।
सुरत चली तज देश भरम का॥

बल पाया अब विरह मरम का।
भटकन छूटा दैर व हरम का॥

अब इस बाणी को सुनो और आँखें खोलो। कहते हैं गुरु ने भेद दिया है। वह जो भटकना थी वह मिट गई। वह जो आवागवन था 84 का भय थ, वह जाता रहा। मनुष्य की जो 84 है उससे बचने के लिए ही हिन्दू जाति अनेक प्रकार के उपाय करती है। तुम 84 से बचने के लिए ही व्यास में या आगरे में या दूसरी जगह हाथ बाँधे गुरु के आगे फिरते हो कि मेरी चौरासी कट जाये। तुम्हारी चौरासी कब काटी जायेगी। जब तक तुम को भेद नहीं मिलता उस समय तक तुम्हारी चौरासी काटी नहीं जाती। चाहे बाबा सावन सिंह को गुरु बना लो, राम को या रब को गुरु मान लो, यह चौरासी का भ्रम दूर नहीं हो सकता। यह जब दूर होगा रहस्य मिलने से दूर होगा।

आज मैं सत्संग में तुम लोगों को वह भेद बताना चाहता हूँ यद्यपि हर एक आदमी इसकी समझ नहीं सकता। क्यों? क्योंकि मनुष्य का मन निश्चल नहीं है। तन थिर नहीं, सुरत थिर नहीं। जब तक उसका मन या सुरत थिर नहीं होती तब तक उसकी समझ नहीं आती। इसीलिए संतों ने सुमिरन, ध्यान और भजन दिया हुआ है कि सुमिरन, ध्यान और भजन करने से तुम्हारा मन थिर हो जायेगा और तुम किसी गुरु की बात समझने योग्य हो जाओ। टिकाव से शान्ति मिलती है।

बरस लागा मेघ करम का।
संशय भागा जनम मरन का॥
तोड़ दिया सब जाल निगम का।
सुख पाया अब हम दम दम का॥

अब ठीक चौरासी से बचने के लिए गुरु के पास नहीं जाते हैं। तुम मेरे पास आये। तुम्हारी स्त्री के बच्चा नहीं होता है। कोई आता है मेरा मुकदमा है। कोई और कुछ कहता है। चूँकि दुनिया को इस वस्तु की आवश्यकता नहीं। इसीलिए संतों ने इस रहस्य या भेद को आम पब्लिक

में नहीं खोला। दूसरे संतों को अपने डेरे, धाम, मन्दिर, मसजिद आदि की आवश्यकता थी। इसलिए भी उन्होंने भेद गुप्त रखा।

मैं वह भेद देना चाहता हूँ। मैं उस मालिक को मिलने, 84 से बचने के लिए सात वर्ष की उमर से लगा था। मैं आप तो राधास्वामी मत या संत मत से आया नहीं। मेरे हृदय की कुरेद थी। एक हृदय द्वारा अपने सतगुरु दाता दयाल महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज के चरण कंवल में पहुँचा। उन्होंने मुझे राधास्वामी मत की शिक्षा दी या भेद दिया मगर मेरी समझ में नहीं आता था। पुस्तकों में उन्होंने बहुत कुछ लिख दिया। यह समझ देने के लिए मुझे गुरु बना दिया। यह भेद मुझ को तुम लोगों के द्वारा मिला इसलिए मैं कहा करता हूँ कि मेरे सतगुरु सत्संगी हैं। क्यों कहता हूँ? दुनिया यह समझती है कि कोई बाहर का गुरु तुम को मरते समय सतलोक ले जायेगा।

चार दिन हुये सूबेदार त्रिलोचनसिंह होशियारपुर अस्पताल में मर गया। उसको डायविटीज़ (मधुमेह) 20–25 वर्ष से थी, जिसके कारण उसके फोड़े उठते थे। दस महीने हुये उसके पाँव में फोड़ा उठा था। उसकी स्त्री मेरे सत्संग में आती रहती है बड़ी भक्त है। उस समय वह कहती है कि बाबा आप मेरे सामने अस्पताल में प्रगट हुये। उसने मुझ को देखा तो मैंने उसको कहा बेटी! तेरा पति ठीक हो जायेगा। अब मैं तो गया नहीं, उसको कुछ कहा नहीं यद्यपि मैं चाहता था कि वह ठीक हो जाये और उस समय वह नीरोग हो गया।

दस महीने के बाद फिर उसको फोड़ा हुआ। उसको अस्पताल में दाखिल किया गया। वह स्त्री रोती हुई मेरे पास आई। बाबा मैंने एक दृश्य देखा है जो मेरे पति के लिए बड़ा भयानक है। 20 दिन अस्पताल में रहने के बाद उसका पति मर गया। दोपहर को उसका आदमी मेरे पास आया कि सूबेदार की हालत बहुत खराब है। आप चलिये। गर्मी थी।

मैंने मामचन्द को कहा यह अलूचे का प्रशाद ले जाओ और उसको दे दो। जो होना है वह तो होकर रहना है। मामचन्द गया। हालत खराब थी। जाकर कहा सूबेदार साहब! यह प्रशाद दिया है पिताजी ने। खा लो। उसके मुँह में अलूचा दे दिया। उसने खाया और गुठली अपने हाथ से निकाल कर फेंक दी। और दो मिनट बाद शरीर त्याग दिया। उसकी छाती पर उस समय मेरी फोटो रखी हुई थी। अब मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ कि वह तो तेरा ध्यान करता हुआ मरा, तेरा प्रशाद खा कर मरा। क्या तुझे पता था कि उसका दम कब निकला? मुझे पता नहीं। इससे सिद्ध हुआ कि जितना तुम्हारा यह ख्याल है यह तुम्हारे अपने मन का है। जिनका मन शुद्ध है उनके हृदय भी शुद्ध होते हैं। जिनका मन अशुद्ध है उनके हृदय भी अशुद्ध होते हैं।

उस समय पिछले सत्संग में मैंने कहा था कि मैं सत्गुरु हूँ। यदि वह व्यक्ति जिसने चिट्ठी लिखी थी यहाँ बैठा हुआ है तो उसको कहता हूँ कि मैं अपने आपको संत सत्गुरु क्यों कहता हूँ? मैं तुम लोगों को सच्चा ज्ञान देता हूँ। तुम इन बातों में आकर कि अन्त समय में बाबा फकीर या कोई और देवी-देवता ले जाते हैं तुम लुट गये। यह समझकर कि बाबा फकीर बड़ी करनी वाला है। वह अन्त समय आकर तुमको ले जायेगा, तुम मानवता मन्दिर में हजारों रुपया लगा देते हो और मुझ से यह आशा करते हो कि मैं तुमको महाराज राय सालिगराम साहब ने अपनी बाणी में लिखा है कि अन्त समय में फिल्म चलती है। जिनसे लगाव या आसक्ति होती है वह दिखाई देते हैं। जिस गुरु से नाम लिया हुआ है वह भी दिखाई आता है और कुछ समय तक उसकी सुरत को ऊपर ठहरना होता है। फिर जब कोई संत सतगुरु दुनिया में आता है फिर वह बाकी की कमाई पूरी करता है।

जो लोग सदा-सदा के लिये बचना चाहते हैं उनको मैं भेद देता हूँ कि ए मानव जाति! तुमको इन सम्प्रदायों, पंथों, महात्माओं ने मूर्ख

बनाया हुआ है। लोग मरते हैं। मेरा रूप आ जाता है। अब मैं तो कहीं जाता नहीं पता नहीं होता कि यह क्या है? यह तुम्हारा अपना ही श्रद्धा विश्वास और अपना ही विचार है। लोग इस रहस्य से अनजान है। किसी के अन्तर राम प्रगट हो गया। उसने कहा कि राम ने मेरा काम कर दिया, इसलिए उसने राम का मन्दिर बना दिया या कृष्ण का मन्दिर बना दिया। चूँकि उसका काम बन गया, उसने समझा कि कृष्ण आया है। किसी ने बाबा फकीर का मन्दिर बना दिया। इस ज्ञान का परिणाम यह निकला कि हम एक मानव वंश होते हुये इस काल रूपी मन ने हमको बाँट दिया। बाहर से न कोई राम या कृष्ण आता है और न बाबा फकीर आता है न कोई गुरु या महात्मा आता है। ऐ इन्सान! यह सारा खेल तेरे अपने मन का है।

अब उसने जिसने मुझे चिट्ठी लिखी उसमें लिखा कि आप झूँठ बोलते हैं। इस समय का सत्गुरु संत कृपालसिंह है और कोई नहीं। अब वह अपने अज्ञान से संत कृपालसिंह को संत सतगुरु मानकर दूसरे जहाँ जहाँ लगे हुये हैं उनको तोड़ता है आपस में भेदभाव फैलाता है। मैंने यह समझकर कि दुनिया असलियत से अनजान है इस सच्चाई की घोषणा कर जाऊँ ताकि जिसकी बुद्धि है वह अपना जीवन आप बना ले और हमारा आपस का जो झगड़ा है- हिन्दू, सिक्ख, मुसलमानों का वह मिट जाये। केवल इस एक ख्याल को लेकर मैंने शिक्षा का क्रम जारी किया है।

गुरु ने दीना भेद अगम का।
सुरत चली तज देश भरम का॥

यहाँ रस्सी पड़ी हुई है। रात का समय है। तुम समझते हो यह साँप है। तुम भ्रम में आकर भाग जाते हो। वास्तव में वह साँप नहीं है। वह रस्सी है। इसलिए मैं उन भ्रमों को तोड़ना चाहता हूँ जो सच्चाई के इच्छुक हैं और अपने घर आना चाहते हैं।

मैंने उस व्यक्ति को जिसने चिट्ठी लिखी थी लिखा था कि अगर संत सतगुरु कोई होता तो इस भेद को खोल कर बताता। क्या किसी ने ऐसा स्पष्ट कहा? बाबा सावन सिंह कहा करते थे– बैठ जा बैठ जा! मैं तो सिरसे था। कोई और होगा। कोई संत सतगुरु होता तो वह दुनिया को सच्ची बात कहता। क्यों नहीं कही? इसके दो कारण है– एक तो जीवों को सच्चाई की जरूरत नहीं। बाबा सावनसिंह कहा करते थे कि यदि मैं साफ बात कहूँ तो तुम में से कोई डेरे में न आवे। तो यह मन्दिर धाम कैसे बने? मुझे इस स्पष्ट वर्णन से कोई नहीं देता। यदि पर्दा रखता कि हाँ मैं जाता हूँ तो लोग अज्ञान से मुझे देते।

वह सूबेदार त्रिलोकसिंह मरा। पहिली बार जब उसकी स्त्री ने कहा तो मैंने कहा मैं नहीं गया। उसके लड़के ने जो फौज में नौकर है, 101/– रु. मन्दिर में भेजा क्योंकि उसका बाप ठीक हो गया था। जब त्रिलोकसिंह की स्त्री आई तो मैंने उससे कहा बेटी! तेरे लड़के का 101/– रू. का मनीआर्डर आया है तू लेजा। मैं नहीं रखूँगा तू अज्ञानिन है। मैंने तेरे पति को नहीं बचाया। यह तेरे अपने कर्म है। अब जब वह मरा यदि मैंने स्पष्ट वर्णन न किया होता, तो क्या मुँह लेकर उस सूबेदारनी के सामने खड़ा होता। मैं यह भेद दे रहा हूँ कि जितने रूप तुम्हारे अन्दर प्रगट होते है यह तुम्हारे अपने ही विचार हैं भाव हैं।

एक सूरतसिंह सतसंगी था। पौने पाँच सो वेतन लेता था। कलकत्ते में लोकल फोरमैन था। जब दातादयाल की समाधि बन रही थी उस समय उसके अन्तर मेरा रूप प्रगट हुआ। मेरे रूप ने कहा कि समाधि के लिये 500/– रु. भेज दे। उसने प्रागलाल को धाम पर रुपये भेज दिये। उसने मुझे लिखा। मैंने गलती की कि मैंने स्थिति स्पष्ट नहीं की। चुपकर गया। परिणाम उसका यह निकला कि साल भर के अन्दर उसने कोई बुरा कर्म किया। उसने मुझे लिखा कि जब आपने रुपया लेना था तो मुझे कह दिया। जब खोटा कर्म करने लगा तो आपने मुझे नही

बताया। वह अपने कुकर्म के कारण पागल हो गया और 1½ वर्ष के बाद मर गया।

भटनागर साहब! तुम मुझे बुलाते हो! मेरे सत्संग के अधिकारी लोग नहीं है। मैं तो अवतार हूँ। संत सतगुरु हूँ। मैं समय की आवश्यकता के अनुसार कहता हूँ। ऐ भोले भाले जीवो! तुमको भेद नहीं मालूम। मैं उठा मैंने तुमको अपने जाल में फँसाया। दूसरा उठा उसने फँसाया। सच्चाई किसी ने वर्णन नहीं की। आर्य समाजियों ने तुमको आर्य समाजी बनाया। सिक्खों ने तुमको सिक्ख बनाया। जैनियों ने जैन बनाया। मुसलमानों ने तुमको मुस्लिम बनाया।

गुरु ने दीना भेद अगम का।
सुरत चली तज भेद भरम का॥

ऐ सत्संगियों! तुम्हारी बदौलत मेरा भ्रम दूर हुआ और मैं निज घर जाने के योग्य हुआ। मेरा भ्रम कैसे गया? जब मुझको तुम लोगों से यह पता लगा कि मेरा रूप अमरीका, अफ्रीका में प्रगट हुआ और मैं था नहीं तो मुझे यह निश्चय हो गया कि मेरे अन्तर जो रूप विचार भाव हुआ करते थे वह थे नहीं मगर भासते थे। जिस प्रकार इस सूबेदार के अन्तर अस्पताल में बाबा फकीर प्रगट हुआ और मैं नहीं था मगर उसने यह समझा कि यह फकीरचन्द है। वह उसका भ्रम था। इसी तरह मेरे अन्तर जितने विचार उठते हैं उनको मैं समझता हूँ कि यह माया है। है नहीं मगर भासते हैं। चूँकि मुझे अपने घर जाने की लगन थी तो उन रंगों को छोड़कर प्रकाश या पारब्रह्म में जाने को विवश हो गया क्योंकि प्रकाश जब शरीर में आता है तब मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार पैदा होते हैं। मैं अब साधन कहाँ करता हूँ–

बरसन लागा मेघ करम का।
संशय भाग जनम मरन का॥

तोड़ दिया सब जाल निगम का।
सुख पासया अब हम दम दम का॥

फल पाया आज हम सम दम का।
भंवर हुआ मन सेत पदम का॥

सेत–सेत कहते हैं सफेद को। वह जो पारब्रह्म सफेद रंग का प्रकाश है वहाँ जाने के मैं योग्य हुआ क्योंकि मुझे भेद मिल गया। क्या भेद मिला? यही कि मन के अन्तर जितने विचार उठते थे यह माया थे। थे नहीं मगर वह भासते थे। मैं जानता हूँ कि मैं ऊँचा बोल रहा हूँ। जीवों को इतना बल नहीं है कि वहाँ तक पहुँच सकें। हाँ, सम और दम करोगे तो वहाँ तक पहुँच जाओगे।

सम दम क्या है? केवल किसी पूर्ण गुरु की संगत में जाकर बैठना, उसके दर्शन करना, उससे प्रेम करना, उसके वचनों को सुनना, गुनना और मनन करना। संत मार्ग में इन्हीं को मुख्य कर्म माना है मगर किन के लिए? उनको जो अपने घर जाना चाहते हैं, जिनको संसार में सच्ची शान्ति नहीं मिलती, 84 को काटने की जिनको आवश्यकता है। यह मार्ग संसारी जीवों के लिए नहीं है। दुनियादारों के लिए है वेद मार्ग, जैसा तुम्हारा ख्याल वैसा तुम्हारा हाल है, जैसी करनी वैसी भरनी, जैसी मति वैसी गति। दुनिया में रहते हुये अच्छे विचार रखो क्योंकि मनुष्य का विचार जब घना हो जाता है तब यह रूप बना लेता है। जब तुम्हारा विचार, संकल्प अति तीव्र होन के कारण या प्रेम के कारण घना हो जाता है तब यह स्थूल रूप धारणा कर लेता है। यह संसार मनोमय है। माया रूपी जगत है। इसका अनुभव मुझे नहीं होता था। अब हो गया।

एक लड़के ने मुझे लिखा– बाबा! मुझ से साईंस का पर्चा हल नहीं होता था। घबराया। परीक्षा हाल में आपको याद किया। आप आ गये। आपने कहा लोग मुझे देख लेंगे। मैं तुम्हारे डैस्क के नीचे बैठ जाता हूँ।

आप बोलते गये। मैं लिखता रहा। इसमें मेरे 100 में से 98 नम्बर आये। कोई कहता है मैंने नदी से डूबते हुये को बचाया। यह डॉ. परसराम बैठा हुआ है। इसकी स्त्री आदमपुर से होशियारपुर के लिये चली। अँधेरा था, डरी। वह कहती है बाबा! तुझे याद किया। तू आ गया। एक फर्लांग तक बातें करते स्टेशन पहुँचे। आपने कहा बेटी! गाड़ी आ गई। अब मैं जाता हूँ और आप लोप हो गये।

यह तुम्हारा अपना ही संकल्प है जो घना हो जाता है। इसीलिए मैं दुनिया को रहस्य या भेद बताता हूँ। बुरी बात मत सोचो। किसी के विरुद्ध कोई बात मत सोचो। किसी का बुरा मत सोचो। यदि संकल्प गहरा होगा तो तुरन्त प्रभाव कर जायेगा। यदि दिन प्रतिदिन कुढ़ते रहोगे, घृणा–द्वेष रखोगे, वहतुम्हारे ही विचार तुमको भी खा जायेंगे और जिनके बारे में सोचते हो उनका भी अनिष्ट करेंगे। उस लड़के का भय के कारण संकल्प बहु तीव्र हो गया। वहाँ बाबा फकीर प्रगट हो गया। यदि संकल्प गहरा नहीं है, सामान्य है तो तुम्हारे विचार आपस में घृणा, द्वेष किसी की बुराई करना किसी को अच्छा न समझना यह धीरे–धीरे मीठा जहर बनकर तुमको नष्ट कर देंगे।

स्वतन्त्रता आई। मैंने सन् 1947 में लिखा कि यह जो सिस्टम चुनाव का है यह संसार में घृणा द्वेष फैलाता है। पार्टीबन्दी होती है। यह देश को खा जायेगा। इस समय कोई शान्ति प्रिय मनुष्य बंगाल में खुला नहीं घूम फिर सकता। मुझे कशमीर जाना था। वहाँ से एक सज्जन की चिट्ठी आई कि बाबा जी! यहाँ मत आना। समाचार पत्रों में कोई समाचार नहीं देता। यहाँ शान्ति नहीं है। यह क्यों है? नित्य प्रति देश में कहीं न कहीं झगड़े होते रहते हैं। इस समय शान्ति प्रिय मनुष्य सुख की नींद नहीं सो सकता। यह वर्तमान प्रजातन्त्र और चुनाव प्रणाली का परिणाम है। मैं संत सतगुरु की हैसियत में वर्षों से पुकार कर रहा हूँ कि वर्तमान चुनाव प्रणाली अत्यन्त दोषपूर्ण है।

मैं अमरजीत के प्रश्न का उत्तर दे रहा हूँ कि मैं क्यों कहता हूँ कि मैं संत सतगुरु वक्त हूँ। सतगुरु नाम है सच्चे ज्ञान का। तुमको सच्चा ज्ञान दे रहा हूँ। यह जो तुम्हारे घृणा द्वेष के विचार हैं, घरों में जो गैरीयत रखते हो– भाई को भाई से, बेटे को बाप से, स्त्री को पति से, यह तुम्हारे विचार तुमको खा जायेंगे, तुमको नष्ट कर देंगे। इसलिए मैंने अपने आपको संत सतगुरु कहा है।

मैंने राधास्वामी मत से क्या सीखा ?

गुरु ने दीना भेद अगम का।
सुरत चली तज देश भरम का॥

गुरु क्या करता है? भेद देता है, रहस्य बताता है। प्राचीन काल में गुरु आज्ञा देते थे। रहस्य नहीं बताते थे। अब बुद्धि बढ़ गई है। क्या और क्यों का सवाल आ गया। त्रिलोचन की स्त्री अपने पति के मरने पर रोई नहीं। मैंने उसके रिश्तेदारों को कहा कि उसको रुलाओं ताकि गम के आँसू उसकी आँखों से निकल जाये। गम भी एक विचार है और खुशी भी एक विचार है। गम का विचार यदि बाहर न निकल जाये तो वह रोग पैदा कर देता है। हमारे पूर्वजों ने स्यापा इसलिए रखा था कि स्त्रियाँ आकर उस मृतक वाले के लोगों को रूलाती थीं ताकि वह गम का विचार निकल जाये। मेरे मित्र थे बलीराम हकीम। उनका जमाई शादी के पाँच वर्ष बाद मर गया। सत्संगी था ज्ञानवान था, वह रोया नहीं। उसने धैर्य रखा। मुझे पता लगा। उसकी स्त्री आई। मैंने कहा यह रोया नहीं है। उसको कोई न कोई रोग होगा और मर जायेगा। 1½ वर्ष के अन्दर उसको दिल का दौरा हुआ और वह मर गया। जो विचार हम सोचते हैं अच्छा या बुरा उसका प्रभाव हमारे मन तथा मस्तिष्क पर रहता है। यदि अच्छा है तो खुशी मिलेगी। इसका प्रभाव पड़ता है। इस मन से निकलने

का इलाज क्या है? वह है ज्ञान। क्या ज्ञान! यह कि ऐ सुरत! यह तेरा घर नहीं है। यह तो काल और माया का देश है। तू इस दुनिया में कर्म भोग वश खेल खेलने के लिए आई है। इस मन के, काल के रूप को समझ, यह काल और माया है। इसमें मत फँस। तेरा रूप पारब्रह्म है शब्दब्रह्म है। तू उसकी अंश है। यह भेद है। जो मुझे अपने जीवन में मिला।

जब राधास्वामी मत में आया तो यहाँ पढ़ा था कि वेदान्त, सूफीइज्म, सब काल मत में है तो मेरे हृदय पर इसका प्रभाव था। मैंने सन् 1905 में प्रण किया था कि सच्चा होकर चलूँगा और जो मिलेगा वह बता जाऊँगा। आज कहता हूँ कि जो कुछ संतों ने कहा है वह ठीक है। तुम सिख हो। मैं हिन्दू हूँ। यदि मैं जरा भी नानक साहब के विरुद्ध कहूँ तो तुम मेरा सिर उड़ाने दौड़ोगे। स्वामी जी ने अपनी बाणी में वशिष्ठ, पारासर, ब्यास, वेदान्त आदि किसी को भी नहीं वखशा। मैं बचपन से इस लाइन पर चला हूँ। जो कुछ मेरा अनुभव है उनके कहने का मुझे अधिकार है। क्या अनुभव किया? सुनो:

गुरु ने दीना भेद अगम का।
सुरत चली तब देश भरम का॥
बल पाया अब विरह भरम का।
भटकन छूटा दैरो हरम का॥

फिर नर्क और स्वर्ग क्या हुये? हमारे मन के शुभ विचारों का रहना तथा आनन्द का रहना स्वर्ग है और अपने बुरे विचारों से दुखी होने नर्क है। अब मुझे स्वर्ग और नर्क का अनुभव कैसे हुआ?

कुछ महीने की बात है मैं यहाँ आया था। एक हजारी सिंह सूबेदार यहाँ था। उसने अपने चचा का हाल सुनाया। उसके चचा का आपरेशन किया गया। उसकी गुदा पर फोड़ा था। डाक्टर ने कहा यह बचेगा नहीं।

वह डेढ़ घण्टे तक आपरेशन के बाद बेहोश रहा। जब होश आया तो कहता है कि हजारीसिंह तूने मुझे बचा दिया। कैसे? जब मेरा आपरेशन हुआ तो आदमी आये और मेरे सूक्ष्म शरीर को लेकर उड़ चले। आगे एक भयानक रूप की स्त्री बैठी हुई थी। उसके आगे और भी बहुत से सूक्ष्म शरीर रखे हुये थे। वह उनको खा रही थी। मैं डर गया कि यह मुझको भी खा जायेगी। मैंने कहा मुझे मरना तो है ही तुम मुझे हजारीसिंह से मिला दो। वहाँ हजारीसिंह आ गया। मैंने कहा– हजारीसिंह! बाबा को कहो मुझे बचावें। हजारीसिंह की बजाय वहाँ बाबा आ गया। बाबा ने उस स्त्री को कहा। तू इसको नहीं खा सकती। जा वापिस चला जा। उन्होंने मुझे फेंका तो मुझे होश आ गई। मैं जानता हूँ कि मैं नहीं था। वह नर्क क्या था? वह उसके अपने ही मन की कल्पना थी। वह जो बाबा आ गया वह भी उसके मन की कल्पना थी। तुम्हारे मन की कल्पना ही माया है। यदि तुम्हारे विचार बुरे हैं तो स्वप्न में भी डरोगे। मरोगे तब भी तुमको तुम्हारे ही विचार यमदूत बनकर तुमको भयानक रूप बना बनाकर डरायेंगे। न कोई राम, न जिन्द आता है न भूत। है यह तुम्हारा अपना ही मन है। यदि अच्छा है तो अच्छी शकल बना लेता है और बुरा है तो बुरी शकल बना लेता है।

बल पाया अब विरह भरम का।
भटकन छूटा दैरो हरम का॥

अब मैं पाप-पुण्य, स्वर्ग-नर्क को क्या समझता हूँ? यही कि यह मन का ही ख्याल है। विचार को काबू कर लिया। अपने रूप प्रकाश और शब्द जो सत है को पकड़ने को विवश हुआ। तुम सब सतपुरुष के अंश हो। ऐ सुरत! तू उस मालिक की अंश है। इस शब्दब्रह्म या पारब्रह्म की अंश है। तू यहाँ आकर माया में फँस गई।

अब यह जो मुझको तुम लोगों से ज्ञान हुआ कि मैं तो किसी के अन्तर नहीं जाता तो जो कुछ मेरे अन्तर रूप प्रगट होते हैं या सत्कार हैं, यह हैं नहीं मगर भासते हैं। फिर मैं पारब्रह्म या शब्दब्रह्म में जाता हूँ। अब मेरे लिये कोई अभ्यास नहीं रहा। अब मैं प्रकाश में जाता हूँ। शब्द को सुनता हूँ। मेरे मन में विचार आता है कि प्रकाश को देखने वाली और वस्तु है। शब्द को सुनने वाली और वस्तु है। मैं तुम्हारी आवाज सुनता हूँ तुम और वस्तु हो और मैं और वस्तु हूँ। फिर मैं सोचता हूँ कि मैं कौन हूँ? मैं वह वस्तु हूँ जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है, शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है। यह ज्ञान हुआ। तुम तो साधन करोगे तब पहुँचोगे मगर बुद्धि के साथ तो मेरी बात से सहमत हो। यह जो मैं है वह है मेरा स्वरूप जिसको कहते हैं अकह, अपार, अगाध अनामी। जिसका न कोई रूप है, न रंग है, न वह अलख है, न अकह है। है कोई अवश्य।

अब सोचता हूँ कि यदि तू वहाँ जाकर कुछ बन गया, शब्द सुन लिये तो किसी का क्या कर सकता है। यदि मैं वह हो गया तो मुझ में शक्ति होनी चाहिये। मुझ में न सही। पलटू साहब जो यह कहता है–

साधो हम वहाँ के वासी।
जहाँ पहुँचे नहिं अविनासी॥

और यह भी कहता है कि ईश्वर की आज्ञा को संत टाल सकता है। उसने यह शब्द अहंकार के साथ लिखे थे और इसकी उसे सजा मिली। दूसरे साधुओं ने उसे जीवित उठा कर तेल के खोलते हुये कढ़ाही में डाल दिया। यदि वह संत बन कर ईश्वर की आज्ञा को टाल सकता था तो इन साधुओं को रोक सकता था।

मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि शब्द और प्रकाश के होने से एक चेतन शक्ति उत्पन्न होती है और मैं चेतन का बुलबुला हूँ। एक सुरत हूँ।

न खुदा, न ब्रह्म, न ईश्वर, न अकाल पुरुष, न अनामी। मैं चेतन का एक बुलबुला हूँ। मालिक की मौज के सिलसिले में शब्द और प्रकाश को प्रगट होने से मेरी मैं बन गई। जब तक उसकी मौज है जैसा उसने खेल खिलाना है वह मुझे यहाँ रखे। जब समाप्त हो जायेगा मेरी मैं भी समाप्त हो जायेगी। अब आवागमन का भ्रम नहीं रहा।

यह तो समुद्र है। क्षोम से कहीं चन्द्र सितारे, हाथी घोड़े बनते रहते हैं। इनमें से एक शरीर बनता है, शूंशूं हो जाती है। वह जो मेरा भटकना था कि हाय! मैं दूसरा जन्म लूँगा। हाय! मेरे साथ यह होगा, इससे शान्ति मिली। मेरा आवागवन होगा या नहीं इसका भ्रम नहीं सताता।

अब मैं करता क्या हूँ? उस मालिके कुल, सर्वाधार जो शब्द और प्रकाश है, जिसकी इस सृष्टि में अभिव्यक्ति है, उसके साथ प्रेम करता हूँ। जब तक मेरा जीवन है उसके साथ गुजरता है। जैसी मेरी प्रकृति है वैसा खेल होता रहता है। इस प्रकार आवागवन का भ्रम गया।

यह दावा करना कि जो कुछ मैंने समझा है यही ठीक है यह गलती है। मैंने अपनी 83 वर्ष की आयु इस सच्चाई की खोज में खोदी। मुझे मान बढ़ाई की आवश्यकता नहीं है। मैं खोजी था कि मेरा राम कहाँ है? अब पता लग गया मेरा राम क्या है? वह अनन्त है, कूटस्थ है। जब गति होती है, शब्द और प्रकाश पैदा हो जाते हैं। एक चेतन शक्ति उत्पन्न हो जाती है। उसकी लीला अपरम्पार है। मुझे पता नहीं लगा सिवाय इसके कि इसको यह कहूँ–

तेरी लीला कौन जाने, तू तो अपरम्पार है।

क्या मिला इस भेद से? परम शान्ति! वह जो मैं दौड़ता था हाय! मेरा राम कहाँ है? हाय मुझे कुछ मिल जाये। मेरा आवागवन समाप्त हो जाये। यह मेरा भ्रम चला गया। आज मैंने आपको भेद दे दिया–

बल पाया अब विरह मरम का।
भटकन छूटा देरो हरम का॥

क्या फल पाया? वह जो मेरी प्रेम की विरह थी उसका मुझे क्या फल मिला? शान्ति। भ्रम चले गये। यही बात दाता दयाल ने मुझ को लिखी थी जब मैं इस धुन में था। दस महीने के बाद उत्तर मिला। लिखा था फकीर तेरे भावों की मैं कदर करता हूँ। मुझे असलियत और शान्ति राधास्वामी मत में हुजूर राय साहब से मिली है। यदि इस रास्ते पर चलने से इन्कार न हो तो तुम लाहौर आकर मिल सकते हो। यही बात हुजूर महाराज एक शब्द में लिखते हैं। उस शब्द के अन्त में एक कड़ी है–

धात माया ने की बहु भाँति।
परख दे बख्शी मोहे शान्ति॥

यही शान्ति हिन्दूओं का इष्ट पद है। मुझे भी अन्त में मिली शान्ति। जिस मालिक की मैं खोज करता था वह क्या निकला? सब कुछ है और कुछ भी नहीं। यदि कुछ है तो शब्द ब्रह्म और पार ब्रह्म है। शेष सब माया है और काया का खेल है।

बरसन लागा मेघ करम का।
संशय भागा जनम मरन का॥

वह कर्म का मेघ क्या है? वह अनुभव है, ज्ञान है, जिससे मुझ को शान्ति मिली और यह भेद और यह ज्ञान बाहर के सतगुरु से मिलता है। मिलता उनको है जो इस रास्ते पर शान्ति और असलियत के इच्छुक है। दुनिया के चाहने वालों को यह नहीं मिलता।

तोड़ दिया सब जाल निगम का।
सुख पाया अब हम दद दम का॥

निगम कहते हैं अज्ञान को, अनसमझी को, भ्रम को। वह जो निगम का जाल था वह तोड़ दिया। अब क्या हुआ? सुख पाया। मन को शान्ति

है। भ्रम नहीं सताते। कोई बात पूछने गछने को शेष नहीं रह गई। क्या शेष रह गया?

फल पाया हम सम दम का।
भंवर हुआ मन सेत पदम का॥ **तथा**

सत पद! पार ब्रह्म सत लोक,
सेत सिंहासन छत्र विराजे।
अनहद शब्द गैव धुनि गाजै॥

वह मालिक मिल गया।

फूँक दिया घर लाज शरम का।
काटा फंदा नियम धरम का॥

जब ज्ञान हो गया फिर नियम धर्म आदमी क्या करे। सब समाप्त हो गया।

ज्ञान ध्यान वाचक हम छोड़ा।
भक्ति भाव का पहिना जोड़ा॥

मैं मालिक को मिलने को निकला था। कभी राम के रूप में भक्ति करता था, कभी कृष्ण के रूप में, कभी दाता दयाल के रूप में। जब मुझे यह निश्चय हो गया कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता तो दाता दयाल भी नहीं आते थे। वह मेरे मन का चक्र था। अब मैं पारब्रह्म और शब्दब्रह्म की भक्ति करता हूँ। यही चौथा पद है।

भक्ति भाव की महिमा भारी।
जानेंगे कोई संत विचारी॥

जो असली भक्ति है, उसकी महिमा संत विचार करके जानेगा। असली भक्ति किस की है? प्रकाश और शब्द की। वह है हमारा सत

कर्त्तार। दुनिया में रहते हुये अपना काम करो, इष्ट सत-पुरुष रखो। मैं नहीं चाहता दुनिया फकीरचन्द को पूजे। यह तो धोखा है।

रात को श्री भटनागर की पत्नी ने एक बात सुनाई कि वह अपने लड़के राहुल को, जो उस समय 4 वर्ष का था, छोड़कर किसी दूसरे गाँव में काम के लिए गई। राहुल ने उसको जाने को कह दिया मगर पीछे वह बच्चा कहाँ रहता, मम्मी आ गई है, बैठी हुई है, बातें कर रही है। वापिस आने पर जब पूछा कि तू रोया तो नहीं तो उसने उत्तर दिया मैं रोता क्यों? तुम तो मेरे पास बैठी हुई थी। मेरे से बातें करती थीं। मैंने पूछा तू आई थी इसके पास उत्तर दिया मैं नहीं आई। यह इस लड़के का अपना ही ख्याल था। तुम्हारी आँखों में मिट्टी डाल कर हम महात्माओं ने अपनी जीविका का साधन बनाया हुआ है। कोई बाहर का आदमी तुम्हारे सामने प्रगट नहीं होता वह अपना ही आप है।

आप आपको आप पहिचानो।
कहा और का नेक न मानो॥

मैं जो वचन कहता हूँ जो रहस्य बताता हूँ यह मेरा नाम दान है। सतगुरु एक है। कोई संत कुपालसिंह को सतगुरु बताता है, कोई महर्षि जी को, कोई बाबा चरनसिंह को, कोई फकीरचन्द को। तुम सब भ्रम में हो। सतगुरु दुनिया में एक है। कबीर आदि संत हुये है। उनकी वाणी सुनाता हूँ, मैं अपने जैसे अज्ञानी गृहस्थियों के लिये उठा हूँ। हम गृहस्थियों का इन धर्म पन्थ वालों ने मूर्ख बना कर लूटा है।

काश! वह अमरजीत सिंह जिसने मुझे चिट्ठी भेजी थी वह आया हुआ होता तो उसको बताता कि सतगुरु कौन है? सतगुरु कोई मनुष्य नहीं है। सतगुरु सत ज्ञान का नाम है या तुम्हारे स्वरूप का, प्रेम का, विश्वास का नाम है। जिस महापुरुष से जिस आदमी को यह रहस्य या भेद मिल जाय और उसको शान्ति मिल जाये उसके जिये वही सतगुरु

है। यदि यह रहस्य तुम को संत कृपालसिंह से मिलता है तो तुम्हारे लिये वही सतगुरु है। जिसको बाबा चरन सिंह से मिल जाये उसके लिये बाबा चरन सिंह ही सतगुरु है। मुझ को यह रहस्य ऐ सत्संगियों तुम से मिला। इसलिए मेरे सतगुरु तुम हो। दया तो दाता दयाल की है। यह रहस्य समझ में नहीं आता था तो गुरु पदवी पर आने से मेरे घट के किबाड़ खुल गये। मुझ को भेद का पता मिल गया। बाणी में आया है–

सतगुरु खोजो रे भाई।

हर ग्रन्थ में पूर्ण गुरु की महिमा गाई गई है। पूर्ण गुरु किसे कहते हैं? पूर्ण ज्ञान, पूर्ण विवेक नाम का पूर्ण गुरु है। सुखमनी साहिब में लिखा है–

सतपुरुष जिन विवेक किया, सतगुरु तिसका नाम।
ताके संग शिष ऊभरे, नानक हरि गुन ज्ञान॥

जिस व्यक्ति ने सतपुरुष को जान लिया है, पहिचान लिया है, उसका नाम सतगुरु है। ऐसे पुरुष की सेवा करो सत्संग करो। फिर वह कहते हैं–

जिभ्या एक अस्तुति अनेक।
सतपुरुष है पूरन विवेक॥

पूरे ज्ञान का नाम सतगुरु है। पूरा ज्ञान जिसको मिलेगा मेरे जैसे निष्कामी, निस्वार्थी और निष्कपटी से मिलेगा मगर मिलेगा उसको जो यह चाहते हैं। कबीर का शब्द है–

सतगुरु चीन्हो रे भाई।
सत्तनाम बिन सब नर बूढ़े, नर्क पड़ी चतुराई॥

वेद पुरान भागवत गीता, इनको सवै दृढ़ावै।
जाको जनम सुफल रे प्रानी, सो पूरा गुरु पावै॥

बहुतगुरु संसार कहावें, मंत्र देत हैं काना।
उपजै विनसै या भवसागर, मरम न काहू जाना॥

कबीर का कथन है कि दुनिया में बहुत से सतगुरु हैं जो नाम देते फिरते हैं। किसी को इस भेद, मर्म का पता नहीं। मैंने इस रहस्य को प्रगट कर दिया। इस रहस्य को कबीर ने भी धर्म दास को देकर गुप्त रखा।

धर्मदास तोहि लखि दुहाई।
सार भेद बाहर नहिं जाई॥

राधास्वामी दयाल भी अपनी बाणी में लिखते हैं–

संत बिना कोई भेद न जाने।
पर वह तोहि कहें अलग में॥

मैंने वह अलगपने का काम छोड़ दिया क्योंकि मैं परम दयाल हूँ। आज दिन तक जितने संत आये वह दयाल थे। परम दयाल कोई नहीं था। जितने सेवा की उसको भेद बता दिया। मैंने परम दयाल बनकर यह रहस्य खोल दिया। मेरे सत्संग से कम से कम कोई लुटेगा तो नहीं। यह अच्छे–अच्छे घरानों की स्त्रियाँ साधुओं के पीछे फिरती हैं, टांगे दबाती हैं। तुम अपने पतियों की टांगे दबाओ, सास की टाँग दबाओ तो तुम को कुछ मिलेगा भी। साधुओं की टाँगे दबाने से तुम को क्या मिलेगा? मैं संत सतगुरु वक्त हूँ। इसलिए नहीं कि मेरा मान करो, मेरा झंडा खड़ा करो किन्तु इसलिए कि बात तुम्हार समझ में आ जाय।

सतगुरु एक जगत में गुरु है जग से है कढ़ि हारा।
कहें कबीर जगत के गुरुआ मर मर लें अवतारा॥

वह सतगुरु कौन है जिसने तुम को भव से निकालता है। यह है शब्द, नाम और सतज्ञान।

आज मैं राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ में गया। मैंने कहा तुम शब्द हिन्दू प्रयोग करते हो। यह शब्द सीमित हो चुका है। मैंने इसलिए मानव शब्द प्रयोग किया है। मेरे यहाँ सिख, सनातनी, राधास्वामी का भेदभाव नहीं है। हम सब मनुष्य हैं। हमारा आदि प्रकाश और शब्द है। उसको पकड़ो।

तुम लोग गुरु के रूप को नहीं समझते। किसी ने बाबा सावन सिंह को गुरु समझा, किसी ने महर्षि जी को। तुम भूल भरम में पड़े हो। इससे घृणा, द्वेष, गैरियत पैदा होती है। आपस में नहीं मिलते। इस रहस्य के जाने बिना धार्मिक एकता नहीं हो सकती। ऐ मानव! ज्ञान को प्राप्त कर। यदि ईश्वर को मिलना चाहता है तो वह शब्दब्रह्म और पारब्रह्म है, शब्द है। मालिक तो शब्द और प्रकाश है, तेरा स्वरूप है मगर मन को छोड़ कर सुरत के साथ शब्द और प्रकाश को प्रेम करना और वहाँ ठहरना सरल काम नहीं।

तो गुरु ज्ञान का नाम है। बाहर के किसी सतपुरुष की संगत करने से, इस लाइन के जिज्ञासु को वह ज्ञान प्राप्त होगा। बाहर में गुरु एक स्थान होता है जहाँ श्रद्धा होती है जहाँ आदमी का अहंकार टूटता है।

सांसारिक लोगों के लिए क्या मार्ग है? शिव संकल्पमस्तु। तुम वहाँ नहीं पहुँच सकते तो अपने मन से कल्याणकारी विचार उठाओ। अपने घर वालों का भला चाहो क्योंकि यह ख्याल की दुनिया है। जैसा तुम सोचोगे वैसे हो जाओगे। जैसी आसा वैसी वासा। घरों में कलह द्वेष मत रखो। तुम्हारे चित्त में कभी ऐसे ऐसे विचार उठते हैं कि लिखे जाये तो पता लग जाय। दुनिया को मुँह न दिखाओ। इस मेरे मन के अन्तर कभी-कभी ऐसे विचार उठते हैं जिनको मैं नहीं चाहता मगर वह उठते हैं। केवल इस ज्ञान से कि यह हैं नहीं भासते हैं, केवल इस ज्ञान से इन

कर्मों का प्रभाव मेरे पर नहीं होता। इन सब महात्माओं के अन्तर उड़ते हैं। यह सब भोले भगत हैं। यहाँ एक बुढ्ढा आया हुआ कहता है कि मन शान्त नहीं। हो क्यों? जीवन में जो-जो कुछ इसने किया हुआ है उसके संस्कार या चिन्ह पड़े हुये हैं। जो कुछ तुमने सोचा हुआ है वह तो फुरेगा ही। मुझ पर रेलगाड़ी के वातावरण का प्रभाव अब तक है।

यह मन का विचार एक तो ज्ञान से जायेगा, एक तुम्हारी सुरत को अन्दर से प्रकाश और शब्द में टिकने का अवसर है उस पर ठहरने से जायेगा। यह अभ्यास बुढ़ापे में, तुम्हारी सहायता करेगा। मेरा मन भी छलांगे मारता है मगर यह ज्ञान जो मुझ को मिला हुआ है इससे मैं इन विचारों को माया समझता हूँ। इसलिए मुझ पर प्रभाव नहीं होता। इस ज्ञान से मैं बच जाता हूँ मगर स्वप्न में कभी-कभी यह ज्ञान नहीं रहता। इसलिए मरने वाले को हमारे यहाँ चारपाई पर नहीं रखते। होश में लाकर भूमि पर रख देते हैं ताकि उसको जाग्रति आ जाय। अन्त में दातदयाल का शब्द सुनाये देता हूँ-

गुरु रूप न समझे कोय, भरम में पड़े अज्ञानी।
गुरु को मानष जानकर भक्ति का करें व्यौहार॥
सो प्रानी अतिमूढ़ है, कैसे जाँय भव पार।
देह के बने अभिमानी॥

मैं दाता दयाल की देह का अभिमानी था। मेरा वह अभिमान जाता नहीं था। उसको तोड़ने के लिए दातादयाल ने यह खेल खिलाया। यह गुरु पदवी दे दी। अब बात मेरी समझ में आ गई। मैं कहा करता हूँ कि जो फकीरचन्द पुत्र पं० मस्तराम को गुरु मानता है उसका आवागवन नहीं कट सकता। मेरी बात को सुनो, समझो, गुना और अपने अन्तर शब्द और प्रकाश को पकड़ो। तब तुम्हारा बेड़ा पार होगा।

गुरु को मानष जानकर सेत प्रशादी ले।
सो तो पशु समान है, संशय में अटके॥
गुरु तत्व न जानी॥

गुरु को मानष जानकर, मानष करें विचार।
सो नर मूढ़ गंवार है, भूल रहे संसार॥
मोह के फाँस फँसानी॥

गुरु को मानष जानकर, भेड़ की चलते चाल।
वह बन्धन को क्यों तजें, व्यापे काया काल॥
पड़े योनी की खानी॥

गुरु नाम आदर्श का, गुरु है मन का इष्ट।
इष्ट आदर्श को ना लखे, समझो उसे कनिष्ट॥
बात बूझे मन मानी॥

बाहर का शब्द जो गुरु मुँह से कहता है, उसके सारभाव को जब तक तुम नहीं समझोगे, तुम्हारा भ्रम नहीं जायेगा। जब तक तुम बाहरी बाणी के सार को नहीं समझोगे तुम अन्दर जा ही नहीं सकते। फिर अन्दर के शब्द को छाँटना पड़ता है।

गुरु भाव घट में रहे, अघट सुघट की खान।
जिसे समझ ऐसी नहीं, वह है मूढ़ महान॥
नहिं गुरु रूप पिछानी॥

चेला तो चित्त में रहे, गुरु चित के आकाश।
अपने में दोनो लखे, वही गुरु का दास॥
रहे गुरु पद घट ठानी॥

सुरत शिष्य गुरु शब्द है शब्द गुरु का रूप।
शब्द गुरु की परख बिन, डूबे भरम के कूप॥
नर जन्म गँवानी॥

गुरु ज्ञान का तत्व है, गुरु ज्ञान का सार।
गुरुमत गुरुगम जो लखे, फिर नहिं भवभय भार॥
कमल जैसी गति आनी॥

राधास्वामी सतगुरु संत ने, कही बात समझाय।
जो नहिं माने वचन को, उरझ उरझ उरझाय॥
कौन समझे यह बानी॥

हो सकता है मेरा अनुभव गलत हो। किसी को इस संसार में कोई दावा नहीं है। अपना अपना जीवन का अनुभव है। जो जिसके अनुभव में आया कह दिया। तुम अपने अनुभव से काम लो। मिसेज भटनागर को लड़के ने गुरु बनकर गुरु बनकर तुमको ज्ञान दे दिया। क्या इससे ज्ञान नहीं होता कि कोई गुरु नहीं आता? अपने अनुभव से लाभ उठाओ।

मुझे इस पंथ में आने से क्या मिला? शान्ति। चाहता हूँ कि जो सत्संगी मुझे प्रेम करते हैं उनको शान्ति मिले। सिवाय इस शुभ भावना के मेरे पास कुछ नहीं है। मैं न कुछ करता हूँ न कहीं जाता है। मैं पाखंड नहीं जगाता।

अपने अन्तर धँसो। बाहर कुछ नहीं रखा है। मैंने बाहर बड़ा-बड़ा दौड़-दौड़ के देख लिया। कहाँ बसरा बगदाद! कहाँ लाहौर! दाता दयाल के पास तीन महीने काट के जाता। स्त्री माँ-बाप, बच्चे छोड़े। अब पता लगा। तेरा बेड़ा उस सतगुरु ने जो तेरी खोपड़ी में रहता है, पार करना है। जो विश्वास रूपी तुम्हारा सतगुरु अन्तर में रहता है वह सहायता करता है। मैंने यह सच्चाई इसलिए वर्णन की है जो यह जो धार्मिक मतभेद है यह दूर हो जाये।